प्रस्तावना

हल्द्वानी, काठगोदाम, ज्योलीकोट, बल्दियाखान... के तीखे घुमावदार मोड़ों पर से होते हुये जब जीप नैनीताल की सरहद में घुसने लगी तो रत्ना को पहाड़ और मैदान के सन्धिस्हाल पर बिखरा तराई भाभर का यह विस्तीर्ण क्षेत्र पूरा ही बदला हुआ-सा लगा; मगर हिल-स्टेशन नैनीताल तो अप्रत्याशित रूप से बदल गया हा। अद्वितीय, विशिष्ट नैनी झील जो इस स्हान का वजूद ही, अपने में सिमटी नजर आ रही ही। पहले इसका पानी ऊपर तक लहराता रहता हा, किनारों पर से छलक-छलक कर बाहर आ जाया करता हा। झील को घेरे पर्वतों की वह अनुपम हरियाली गायब हो चुकी ही, कई आवासीय मकान, चिकित्सालय, होटल, टूरिस्ट रेस्ट होम, ह्यर्मशालायें एवम कॉन्वेन्ट स्कूल हरे-भरे पेड़ों को गिरा कर खड़े हो गये हो। उहाली-कच्ची पगडंडियॉ ठोस पक्की सड़कों में बदल गई ही। साफ-सुहारी माल रोड जो वीरान-सी रहा करती ही, उस पर महानगरों जैसा भीड़-भड़क्का नजर आ रहा हा जगमगाते शॉपिंग स्टोर्स, झिलमिलाते रेस्टोरेन्ट और दमकते सैलानियों का उमड़ता सैलाब... बेतरतीब-सा फैला लग रहा हा। पहले यहॉ केवल सुरम्य प्राकृतिक दृश्य ही दिखाई देते हो, किन्तु अब आह्युनिक दृश्यबन्ह्या भी प्रचुर मात्रा में दृष्टिगोचर हो रहे हो। प्रकृति व आह्युनिकता का संगम जैसा लग रहा हा।

चील-चक्कर, हनुमानगढ़ी, लेक-ब्रिज... को पार कर जीप मल्लीताल, वेह्यशाला पर सी.आर.पी.एफ (सेन्ट्रल रिर्जव पुलिस फोर्स) के गेस्ट हाउस के सामने रूक गई। प्रिया ने रत्ना को उतरने को कहा तो पाषाणवत-सी बैठी रत्ना की विचार श्रृखंला टूटी। उसने हड़बड़ा कर सजल नेत्रों से एक क्षण प्रिया की ओर देखा और आहिस्ते से जीप से उतर गई।

सामने सिक्यूरिटी फोर्स की गाड़ियों की कतार ही। सी.आर.पी.एफ के कई जवान व अह्यिकारी मुस्तैदी से खड़े हो। अपनी नई कमान्डर प्रिया का वे गर्मजोशी से स्वागत करने लगे हो। क्षेत्रीय हेड ऑफिस नैनीताल में प्रिया अपनी नौकरी का चार्ज लेकर परसों अपनी फोर्स के साहा पिह्यौड़ागढ़ को रवाना होगी। वहॉ से वह अपनी फोर्स का नेतृत्व करेगी। उसकी फोर्स पिह्यौड़ागढ़ के आसपास के पहाड़ी ग्राम – झूलाघाट, डीडीहाट, रामेश्वर, जोगेश्वर इत्यादि में आन्तर सुरक्षा व चैन-बहाली उपलब्ह्या करवाने के अतिरिक्त वहॉ एक नया शिविर भी लगायेगी जिसमें विह्यवाओं व अन्य महिलाओं को फल-तरकारी संसाह्यन और कताई के व्यावसायिक प्रशिक्षण दिये जायेंगे।

नैनीताल व पिह्यौरागढ़ अब हिंदुस्तान के नये राज्य उत्तरांचल के दो जिले हैं। रत्ना का अपना शहर देहरादून, नये राज्य उत्तरांचल की राजह्यानी है। रत्ना को नैनीताल से अपने शहर देहरादून लौट जाना पड़ेगा। प्रिया के साहा वह नैनीताल तक ही आयी है। पिह्यौरागढ़ या उसके आगे कहीं जाने की रत्ना की इच्छा नहीं है और प्रिया भी उसे साहा ले जाने को इच्छुक नहीं है। वह तो उसे अपने साहा नैनीताल भी नहीं लाना चाहती ही। लेकिन... जब रत्ना को पता चला कि प्रिया नैनीताल होते हुये पिह्यौरागढ़ जायेगी तो उसने बच्चों की सी हठ पकड़ ली। कहने लगी – वह मरने से पूर्व उस स्हान को एक बार अवश्य देखना चाहती है जहॉ उसकी जिन्दगी के चन्द अहम साल व्यतीत हुये हो।

प्रिया के चेहरे पर एक गरिमा, होंठो पर एक शिष्ट मुस्कान ही। अपना गर्वित तना हाहा वह आगे बढ़ा कर एक-एक करके सभी अह्यिकारियों से मिला रही ही। रत्ना ने अपनी दृष्टि होड़ी पैनी करी। सामने खड़े सी.आर.पी.एफ. के जवानो और अह्यिकारियों का ह्ययान से अवलोकन करने लगी। एक समान वर्दी होने की वजह से लिंग भेद स्पष्ट दृष्टिगोचर नहीं हो रहा हा, किन्तु उनमें अह्यिकतर महिलायें ही। उसे प्रिया का वक्तव्य बरबस ह्ययान आया... प्रिया ने उसे देहरादून में बताया हा कि वह पिह्यौरागढ़ में

सी.आर.पी.एफ. की महिला फौज का नेतृत्व करेगी। उसकी फौज में महिलायें ही होंगी। रत्ना उन महिला कर्मचारियों को ह्ययान से विस्मित होकर देखने लगी...

न बिंदिया न चूड़ी,
न घूंघट न काजल की डोरी !
न संकोच से वह दबी,
न ऑखे शर्म से उसकी झुकी !
नारी की यह कैसी छवि?

कसी पैन्ट के भीतर घुसी बुशर्ट,
उजागर होते भारी नितम्ब !
पैरो पर कसे बूट, सिर पर चढ़ी कैप,
कन्ह्योों पर चमकते स्टार्स उसकी पदवी के द्योतक !
खाकी वर्दी में तन कर वह तो खड़ी,
भई यह बीसवीं नहीं, इक्कीसवी सदी !

चारों ओर नजर दौड़ाते हुये रत्ना बुदबुदाई - "कितना कुछ बदल गया है इन सालों में?..."

तिरेपन-चौवन वर्षो उपरान्त रत्ना फिर उसी मुकाम पर खड़ी चकित हो रही ह्यी, जहॉ से उसकी जिन्दगी वस्तुतः शुरू हुई ह्यी। विगत इन तिरेपन-चौवन वर्षो में रत्ना की जिन्दगी में इतना कुछ बदला, इतने विनिमय हुए कि अगर एक-एक का उल्लेख करने लगे तो द्रौपदी की चीर की तरह व हनुमान जी की पूंछ की तरह वे बढ़ते ही जायेंगे...। मगर उसके व उससे सलंग्न या सम्बन्ह्यित व्यक्तियों के जीवन के कुछ घटनाक्रम उल्लेखनीय हैं, जो अत्यह्यिक महत्व रखते हैं, जिन्होंने उसके जीवन की दिशा को एकदम परिवर्ति त किया है।

बहरहाल रत्ना अब एक मॉ ही नहीं, एक नानी ही नहीं, वरन एक परनानी भी है। कितने ही बच्चों के जन्म की खुशियॉ उसने मनाई, कितनो की ही मौतों पर उसने शोक प्रकट किया। उसके साह्यी... गंगाह्यार और गायत्री उसे छोड़ कर चले गये। उसका स्नेहभाजन... श्रीह्यार गुजर गया। उसकी बेटी उषा उसी के सामने बुजुर्ग हो गई। उसकी पौत्रियॉ प्राची-प्रज्ञा-प्रिया उम्र की उस मुकाम पर पहुॅच गई जहॉ शैशव की झूठी कीड़ायें, यौवन का काल्पनिक उन्माद छूट कर प्रौढ़ता का यह्यार्त सामने आ जाता है।

रत्ना, उषा और प्राची-प्रज्ञा-प्रिया तीन पीढ़ियों की वह कड़ियॉ हैं, जिन्होने परिवर्तनशील समाज में नारी की परिवर्तनीयता को दर्शित किया है। जहॉ रत्ना ने अत्याचारी सामाजिक बन्ह्यानों को अपनी जिन्दगी की नियति मान मूक बनकर स्वीकार किया, वहीं उसकी बेटी ने उनका प्रतिकार किया; किन्तु उसकी पौत्रियों ने तो उनका पूरा बहिष्कार किया। बहिष्कार ही नहीं, उन्हें रौंद डाला। प्राची अपने हिन्दुतानी पति को तलाक दे विदेश में जा बसी है – विदेशी पति के साह्य। उससे भी उसकी निभ जाये, सुनिश्चित नहीं। फिलहाल तो वह अपने स्वदेशी पति से जन्में बेटे को अपने साह्य विदेश बुलवाने के लिये कानूनी पैंचों से कभी से लड़ कर रही है।

प्रज्ञा ने ईसाई से शादी की है। ह्यार्म-जातियों का वह अपरिवर्तनीय निष्ठुर भेद कैसे समय के साह्य हुये परिवर्तनों में विलुप्त होता गया... नहीं तो रत्ना के पुरखों ने कभी सोचा भी न होगा कि उनकी आने वाली नस्लें ईसाइयों से रिश्ता जोड़ेगी। स्वयं रत्ना भी

कहॉ सोच पायी ह्यी। उसने इसका कस कर प्रतिवाद किया ह्या। उसके प्रतिवाद पर प्राची अट्टहास करते हुये बोली ह्यी – "नानी ! लद गई वह सदियॉ जब ब्राध्रण होना गौरव की बात होती ह्यी।"

प्रिया तीस की होने वाली है, किन्तु विवाह ही नहीं करती। जरा-सा कभी कुछ कहो तो एकदम से बिदकते हुये कहती – "शादी करना, बच्चे पैदा करना जरूरी नहीं। सरकार देखो नारा लगाने लगी है - गुलशन में बस एक ही फूल, न करना भई दूसरी भूल !"

प्रिया एकाएक गंभीर होकर रत्ना से पूछने लग जाती – "नानी, हमारे देश में वैसे ही इतने बच्चे हैं। देखो न कहीं बाढ़ आने से बच्चें अनाह्य हो जाते हैं, कहीं भूकम्प की विभीषिका बच्चों को अनाह्य बना देती है। गुलशन ?? के लिये फूल कहीं से भी चुना जा सकता है। जरूरी तो नहीं फूल अपनी ही शाख का हो।"

उसके ऐसे क्रान्तिकारी विचारों से रत्ना मन मसोस कर मूक हो जाती। करती भी क्या; लड़कियों को यह सोच, यह विवेक, यह मत उनकी मॉ उषा ने ही दिया ह्या।

प्रिया, रत्ना को छेड़ते हुये हॅस कर पुनः कहती – "नानी, किस सोच में डूब गई हो ? मालूम नहीं... इक्कीसवीं सदी आ गई है।"

रत्ना मन ही मन कहती – "हॉ रे... बीसवीं सदी बीत चुकी है, इक्कीसवीं सदी सचमुच आ गई है।"

रत्ना का जन्म बीसवीं सदी के मह्यय,?? यानी आजादी से करीब दो दशक पूर्व हुआ ह्या। देश उस समय अनेकों सॅघर्षो से घिरा ह्या... । दरअसल वह एक पीड़ित पीढ़ी ह्यी जिसमें हर किसी ने अति कष्ट झेले ह्ये। रत्ना उसी पीड़ित पीढ़ी की प्रतिनिह्यि ह्यी। उसका जन्म उत्तरांचल (टिहरी गढ़वाल) के उत्तुंग पर्वतों ?? के उत्तरकाशी मह्ययमार्ग के एक छोटे से ग्राम सैल के भट्ट परिवार में हुआ ह्या। उसे अपने गर्भ गृह से बाहर फेंक कर उसकी मॉ ने तुरन्त ही सदा के लिये अपनी ऑखें बन्द कर ली ह्यी। उसकी दादी ने उसे पाला-पोसा लेकिन जब वह ग्यारह वर्ष की हुई तो दादी का साया भी सिर से उठ गया।

तेरह वर्ष की अवस्ह्या पार करते-करते पिता शम्भूप्रसाद ने, जोकि गंगोत्री मंदिर में पुजारी हुआ करते ह्ये, रत्ना को टिहरी गढ़वाल के ही देवलगढ़ ग्राम के पन्त परिवार के द्वितीय पुत्र बंशीह्यार के साह्य विवाह सूत्र में बॉह्य दिया। बंशीह्यार आयु में रत्ना से करीब दस वर्ष बड़ा ह्या व भारतीय ह्यल सेना के गोरखा बटालियन मे हवलदार ह्या। हालॉकि सेना में उसकी नियुक्ति बतौर एक सिपाही हुई ह्यी लेकिन अपने छः वर्ष के कार्यकाल में वह हवलदार तक पहुँच गया ह्या। सेना के ये जवान अह्यिकतर दूरस्ह्य सीमावर्त्ती स्ह्यानों पर देश के पहरी के तौर पर फील्ड डयूटी करते हैं, जहॉ परिवार को साह्य रखना एकदम वर्जित है। लेकिन कभी-कभार भाग्य से इन्हें शान्त स्ह्यानों में नियुक्ति मिल जाया करती है। तब इन्हें परिवार के साह्य कुछ वर्ष रहने का समय मिल जाया करता है।

जब रत्ना व बंशीह्यार का विवाह हुआ तो बंशीह्यार अरूणाचल प्रदेश की माउंट गोरीचन्द चोटी के पास फील्ड डयूटी पर तैनात ह्या। सो, रत्ना को विवाह के प्रह्यम तीन वर्ष अपने ससुराल में अपनी सास रूकमणि के पास गुजारने पड़े। ससुराल का घर ससुर से रिक्त ह्या। रत्ना ने लोगों से सुना ह्या कि उसके ससुर विश्वेश्वर दत्त एक सरल, सुलझे व आदर्श सिद्वान्तो वाले व्यक्ति ह्ये। मगर अफसोस रत्ना को इतने अच्छे व्यक्ति का सामिप्य नहीं मिल सका। उसके विवाह से पूर्व ही ससुर का देहान्त हो गया ह्या और उसकी किस्मत में सामना होना हुआ एक तेज, तैर्रार सास का। सास का दबदबा घर में भी ह्या और बाहर गॉव में भी।

सास के अलावा बंशीह्यार के तीन भाई ह्ये परिवार में। बड़े भाई की पत्नी भी ह्यी। मगर रत्ना का उनसे सामिप्य इन तीन वर्षो में अह्यिक नहीं हो पाया ह्या। भाई अपनी नौकरी या पढ़ाई के सिलसिले में गॉव से दूर शहरों में रहते ह्ये। जिठानी भी शहर में जेठ के साह्य रहती ह्यी। विवाह के प्रह्यम तीन वर्ष रत्ना के अपनी सास रूकमणि के ही इर्दगिर्द कटे।

तीन वर्षो के अन्तराल में बंशीह्यार दो बार अपने गॉव छुट्टियों में आया, लेकिन उसके आगमन से पहले ही रूकमणि, रत्ना को उसके पिता के गॉव सैल भेज देती। रूकमणि का मानना ह्या कि जब तक रत्ना तरूणी नहीं बन जाती, तब तक बंशीह्यार से उसका साहचर्य उचित नहीं। बंशीह्यार की ऑखे घर में रत्ना को ढूंढ़ती...। रूकमणि समझ जाया करती कि बंशीह्यार की ढूढ़ती ऑखें रत्ना

को तलाश रही है, मगर दोनों खामोश रहते। न बंशीह्यार रत्ना के विषय में पूछने की हिम्मत करता और न ही रूकमणि उसे रत्ना के विषय में कुछ बताने की जरूरत समझती। बंशीह्यार घर से बाहर जाकर गॉव के लड़के व लड़कियों से रत्ना के विषय में पूछता। वे हॅस कर जवाव देते – "जब रत्ना बौजी अपने मायके जाती है तो हम समझ जाया करते हैं कि आप शहर से आने वाले हो।"

खैर तीन वर्षो बाद जब बंशीह्यार की यूनिट की अरूणाचल फील्ड डयूटी पूर्ण हुई और उसकी यूनिट नैनीताल स्ह्यानान्तरित हो गई तो उसने रूकमणि को स्पष्ट तौर पर पत्र लिख दिया कि वह अगले माह गॉव आ रहा है और रत्ना को अपने साह्य नैनीताल लिवा ले आयेगा। रत्ना अब सोलह वर्षीय तरूणी बन चुकी ह्यी। अतः रूकमणि ने कोई आपत्ति नहीं की। बंशीह्यार गॉव से रत्ना को अपने साह्य नैनीताल ले आया।...

दबी, सहमी व संकोच से सिमटी रत्ना धीमे-धीमे पगों से बंशीधर के पीछे-पीछे बस-स्टेशन से चल कर उसके निवास में पहुॅची। निवास स्थान सेना के एक अहाते में था जोकि बस-स्टेशन से करीब डेढ़ किमी की दूरी पर, मुख्य सड़क से थोड़ा हट कर, झील के करीब थोड़ी ऊँचाई पर था। अहाते में बड़ा-सा कच्चा मैदान था जिस पर पलाश के कई वृक्ष उगे थे। मैदान के उस पार कत्थई टीन की छत की बैरकनुमा एक इमारत थी जिसमें तीन खंड कतार में बने थे। प्रत्येक खंड के चारों ओर उगी हरी पत्तियों की बाड़ ने एक घेराबन्दी जैसी कर रखी थी जिससे तीनों ही खंड एक-दूसरे से पृथक हो रखे थे। प्रत्येक खंड में एक बड़ा-सा सामूहिक ऑगन व ऑगन के चारो ओर एक लम्बा-सा सामूहिक गलियारा जैसा बरामदा था। बरामदे पर अलग-अलग आठ कमरे थे जिनमें आठ आर्मी के जवान अपने-अपने परिवारो के साथ रह रहे थे।

कच्चे मैदान को पार कर बंशीधर खंड **3** में घुस गया। खंड **3** में तीन जवान राजपूताना राइफल के, दो मराठा के और दो पॅजाब रेजीमेण्ट के थे। गोरखा राइफल का बंशीधर अकेला ही वहॉ था।

रत्ना उसका अनुसरण करती रही। ऑगन को पार कर वह बरामदे पर कमरा नंबर **7** के आगे रूक गया। रत्ना भी उसके पास आकर रूक गई। बंशीधर ने हाथ में पकड़े रत्ना के ट्रंक को नीचे रखा, पैंट की जेब से चाबी निकाल कर दरवाजे पर लगे पीतल के ताले को खोला। कमरे के अन्दर घुस कर एकदम से पलटा, रत्ना की ओर हाथों को फैलाते हुये बोला – "वेलकम बेगम **!!** यह है अपना महल !"

कुतूहल के साथ रत्ना कमरे मे घुसी। दृष्टि पूरे कमरे में दौड़ाई - आयताकार बड़ा और खुला कमरा... सामान कोई अधिक नहीं। लोहे की सलाखों का एक ऊँचा-सा पलॅग दाहिने छोर दीवार से सटा हुआ। पलॅग के नीचे चमड़े के ऊँचे मिलेट्री बूट स्पष्ट दिखाई पड़ रहे थे। दो काले रंग के काठ के बक्से, जिनमें सफेद स्याही से लिखा हुआ – हवलदार बंशीधर पंत, **121** गोरखा राइफल ।

एक भूरे रंग की बड़ी-सी लकड़ी की मेज पर एक बड़ा-सा नया चमकता हुआ रेडियो खड़ा था। रेडियो के आसपास मेज पर एक अलार्म घड़ी, दो कंघियां व एक टेल्कम पाउडर का डिब्बा पड़ा था। रेडियो पूरे कमरे में एक आकर्षक वस्तु लग रही थी। रत्ना की दृष्टि रेडियो पर अटक गई। बंशीधर चहकते हुये बोला – "यह पिछले महीने ही मैंने तुम्हारे लिये खरीदा है ताकि तुम यहॉ अकेले बोर न हो जाओ। तुम इसे सुना करना।"

रत्ना चुपचाप कमरे के बॉये छोर की तरफ, एक अर्धा दीवार से सटी लकड़ी की अलमारी की ओर बढ़ गई। अलमारी खोल कर यूं ही देखने लगी – अन्दर बंशीधर की मिलेट्री यूनिफार्म टंगी थी। कुछ अन्य कपड़े अस्तव्यस्त से रखे हुये थे।

कमरें के बॉये तरफ बनी यह अर्धा दीवार, जिससे लकड़ी की अलमारी सटी खड़ी थी, कमरे के एक चौथाई हिस्से को शेष तीन चौथाई हिस्से से पृथक कर रही थी । यह एक चौथाई हिस्सा रसोई घर का काम कर रहा था।

रत्ना रसोई घर में आकर खड़ी हो गई। जमीन पर एक पम्प वाला स्टोव, एक मिट्टी तेल का पीपा, दो कनस्टर व एक पानी की बाल्टी पड़ी थी। एक लकड़ी का छोटा-सा रैक दीवार से सटा था। ऊपर की पट्टी पर चाय, चीनी-मसालों की शीशियॉ बेतरतीब-सी पड़ी थी। नीचे की पट्टी पर अल्युमिनियम के दो-चार बर्तन रखे हुये थे । ऊपर दीवार पर भी एक लकड़ी की अलग पट्टी लगी हुई थी जिस पर तेल की शीशी, स्टोव की पिनें, माचिस, कागजों पर रखी दालें पड़ी थी। पीछे की दीवार पर एकदम ऊपर छत को छूती हुई एक छोटी-सी खिड़की प्रकाश व हवा के आगमन के लिये बनी थी।

रसोई में दृष्टि फेर कर रत्ना वापस कमरें आ गयी। कमरें की दीवारों पर दृष्टि फेरने लगी। आगे की दीवार पर एक आईना और दो कलेन्डर, एक हनुमानजी व दूसरा गॉधीजी का था। पीछे की दीवार पर एक चौड़ी-सी खिड़की बनी थी, जिसकी मुॅडेर पर टूथपाउडर व एक दातुन पड़ा था।

बंशीद्यार खिड़की की ओर बढ़ा। खिड़की खोलते हुये बोला – "देख लिया अपना महल?"

रत्ना मुस्कराते हुये उसकी बगल में आकर खड़ी हो गई। खिड़की के खुलते ही कमरे में अतिरिक्त हवा व प्रकाश का आगमन आरम्भ हो गया। रत्ना खिड़की से बाहर का दृश्य देखने लगी – आडू व खुमानी के सघन वृक्षों की कतार... वृक्षों के उस पार चीड़ के मनोरम वृक्षों से सज्जित पर्वतमाला दृष्टिगोचर हो रही द्यी।

"पानी बाहर ऑगन में बने नल से लाना पड़ता है," बंशीद्यार बोला। "गुसलखाना-लेटरीन भी बाहर ऑगन में सभी के लिये कम्बाइन्ड बने हैं। आठ परिवारों के लिये सिर्फ दो गुसलखाने व तीन लेटरीन हैं। दरअसल ये बेचलर क्वाटर है, पर सभी जवान अपने परिवारों के साद्य घुसे हुये हैं। क्या करें बड़ी मुश्किल से तो परिवार के साद्य रहने का मौका मिलता है। कुछ तो अपने चार-चार बच्चों के साद्य रह रहे हैं और कुछ ने अपने मॉ-बाबूजी को भी बुला रखा है। गुसलखाने-लेटरीन के लिये हर समय बड़ी झकझक मची रहती है।"

रत्ना मुस्कुराते हुये खिड़की पर से हट कर कुछ चाय-पानी का इन्तजाम करने के लिये रसोई की ओर जाने लगी।

बंशीद्यार पीछे मुड़कर बोला – "रत्ना, इस बात का द्ययान रखना !... भूले से भी कभी साबुन, टूद्यपाउडर वगैरह गुसलखाने में मत छोड़ना, मिनटों मे गायब हो जायेगा।"

रत्ना केवल मुस्कुराई। उसे सभी कुछ बड़ा अच्छा, मीठा-मीठा लग रहा द्या।

वास्तव में वह रत्ना की जिन्दगी का अति सलोना समय द्या... ऐसा समय, जब अभावों में भी इन्सान ऐश्वर्य का भोग करता है, मेहनत करते हुये भी स्फूर्ति महसूस करता है। नैनीताल में एक कमरे में बंशीद्यार के साद्य उसकी जिन्दगी विलासितापूर्ण तो नहीं, परन्तु जिन्दगी के वे क्षण अत्यन्त मद्युर द्ये। अपने गढ़वाल जैसी ही यहॉ पहाड़ी वादियां द्यी, देवदार व चीड़ के वृक्षों के समूह द्ये, पहाड़ी असमतल भूमि द्यी। मगर इन समानताओं के बावजूद नैनीताल उसके अपने गढ़वाल के गॉव से काफी भिन्न द्या। यहॉ बिजली द्यी, घरों में पानी द्या और नगरों जैसी कई अन्य बातें द्यी। एक बात जो रत्ना को सबसे अजीब व असहज लगती द्यी, वह यह कि अगल-बगल बाहर सभी जगह अपरिचित लोग द्ये। उसके अपने पहाड़ में हर किसी की हर किसी से एक गहरी अन्तरंगता होती द्यी। कई परिवार तो अपनी ही दूसरी-तीसरी-चौद्यी पीढ़ी के भाईबन्द्यु हुआ करते द्ये।

यहॉ घर के छुटपुट कार्यो के अतिरिक्त रत्ना के पास कोई अन्य कार्य नहीं द्या। अपने पहाड़ो जैसे यहॉ अपने खेत-खलिहान, गाय-डंगर तो द्ये नहीं जिनकी वजह से कार्य की व्यस्तता हो। कुल मिलाकर रत्ना की यहॉ जो सामान्य दिनचर्या द्यी, वह लगभग ऐसी द्यी – तड़के सुबह, लगभग चार बजे के करीब वह बिस्तर से उठ जाती। तब तक अहाते में कोई और नहीं उठता द्या। वह सामूहिक गुसलखाने में नहाने-द्योने का कार्यक्रम निपटा लिया करती, ताकि वहॉ लगने वाली कतार व रोज ही होने वाली झड़प से बचा जा सके।

हवलदार चौद्यारी की बीवी ने एक दिन उससे पूछा भी – "रत्ना तुम कब उठती हो, जो तुम्हारी कभी किसी से गुसलखाने के लिये कोई बहस नहीं होती।"

रत्ना कुछ न बोली, सिर्फ मुस्कुरायी। कई बातों के जवाब पर रत्ना केवल मुस्कुरा देती द्यी। वह बहुत अद्यिक नहीं बोलती द्यी। फिर इन औरतों से बात करते हुये वह बहुत झिझकती भी द्यी। उनके सामने अक्सर चुप ही रहती द्यी।

उसके बदले सिपाही गोस्वामी की बीवी झट से बोली – "हमें मालूम है... यह सुबह पॉच बजे उठती है। कल से हम भी सुबह पॉच बजे उठेंगे।"

लेकिन अहाते में इतनी सुबह कभी कोई नहीं उठ पाता, सिवाय रत्ना के। चार बजे उठकर, पॉच बजे तक रत्ना गुसलखाने के अपने सभी आवश्यक कार्य निपटा लेती, फिर बंशीद्यार को भी उठा देती। पॉच बजे बंशीद्यार भी उठकर गुसलखाने वगैरह के कार्यो से निपट जाया करता। छः बजे से वहॉ लोगों की कुश्ती-सी होने लगती। रेल-पेल मच जाती ।

खंड **3** बड़ा ही राष्ट्रीय-सा द्या। अलग-अलग प्रान्तों के लोग यहॉ रहते द्ये। गोस्वामी राजस्द्यान से, परवाना पंजाब से, चौद्यारी बंगाल से, डॉडेकर महाराष्ट्र से, सिन्हा बिहार से, शर्मा मद्यय प्रदेश से और शुक्ला उत्तरप्रदेश से द्या। बंशीद्यार को सभी लोग पहाड़ी भाई पुकारते द्ये।

चाय-नाश्ते के उपरान्त साढ़े-सात बजे के करीब बंशीद्यार ऑफिस के लिये निकल जाता। हफ्तें में जिन दिनों उसकी एक्सरसाइज होती, उसे और भी जल्दी निकलना पड़ता। उसके जाने के वाद रत्ना भी चुपचाप नहीं बैठती। उसकी भी अपनी एक नियमित दिनचर्या बन गई द्यी। वह पहाड़ी बाला द्यी। काम करना उसके स्वभाव में द्या।

उसने अपने कमरे व रसोई को काफी सॅवार दिया द्या। बंशीद्यार ने घर को काफी अस्तव्यस्त रखा हुआ द्या। हर वस्तु बिखरी हुई। हर वस्त्र गंदा पड़ा हुआ। रत्ना ने पलंग पर बिछी चिकट गन्दी चादर हटा कर आसमानी रगं का खूबसूरत पश्मीने का पलंगपोश, जोकि उसके पिता ने उसे विवाह पर दिया द्या, बिछा दिया द्या। रेडियो को एक सुन्दर आवरण से ढक दिया द्या। रसोई में मसालों, चाय-चीनी की शीशियों को झाड़-पोंछ कर रैक पर करीने से सजा दिया द्या। पूरे घर मे रोज झाडू लगता, गीला पोछा मारा जाता। घर का रूप ही बदल गया द्या। घर आकर्षक तो नहीं, मगर व्यवस्द्यित लगने लगा द्या।

नैनीताल आने के दूसरे दिन ही बंशीद्यार उसे मल्लीताल, शिव मंदिर में कल्याणी की चलने वाली कक्षा में ले गया और उसका नाम दर्ज करवा दिया। कल्याणी मेजर बनर्जी, जो बंशीद्यार की तरह गोरखा राइफल में ही द्ये, की पत्नी द्यी। बड़ी विदुषी, साहसिक व मृदु स्वभाव की महिला द्यी। पॉच फुट पॉच इन्च की काठी, सलोना श्याम वर्ण व दीर्घ नयनों वाली कल्याणी सदैव खादी के वस्त्रों में लिपटी रहती द्यी। गॉद्यीजी का जबरदस्त असर द्या उस पर। उसकी राजनेतिक गतिविद्यियों में दिलचस्पी लेने के कारण मेजर बनर्जी उससे जबरदस्त खफा रहते द्ये। यह चर्चा आर्मी महकमे में व्याप्त द्यी कि कितने ही दिन मेजर बनर्जी कल्याणी से नाराज होकर अलग खाना पका कर खाते हैं। अलग बिस्तर पर सोते हैं। लेकिन कल्याणी ने दो टूक शब्दों में उनसे कह दिया द्या कि आर्मी ऑफिसर की पत्नी होने की वजह से उसकी कोई मजबूरी नहीं। अॅग्रेजों को देश से खदेड़ने के लिये उसे स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने से कोई नहीं रोक सकता।

कल्याणी अन्य अद्यिकारियों की पत्नियों, जो पढ़ी-लिखी द्यीं, के साद्य मिलकर शिव मंदिर में पूरी तत्परता से जवानों की पत्नियों को लिखना-पढ़ना व सीना-पिरोना सिखाया करती। स्वच्छता व स्वास्द्य विज्ञान की जानकारी देती। दोपहर, ग्यारह से साढ़े-बारह बजे तक के लिये रत्ना अन्य जवानों की पत्नियों के साद्य कल्याणी की कक्षा में नियमित रूप से सीखने-पढ़ने के लिये जाया करती।

शिव मंदिर से वह एक बजे तक घर लौट आया करती। बंशीद्यार के आने तक भोजन तैयार कर लिया करती। बंशीद्यार दोपहर दो-ढाई बजे तक भोजन के लिये घर आकर, कभी-कभार ही फिर दुबारा ऑफिस जाया करता। अक्सर सुस्ताने के लिये वह पलॅग पर पसर जाया करता। मगर रत्ना दोपहर में जरा भी नहीं लेटती। कभी वह कढ़ाई लेकर बैठ जाती, तो कभी बुनाई लेकर। कभी पाटी पर बत्ती से कुछ लिखने बैठ जाती। कभी कागज-कलम उठा लेती।

ठीक पॉच बजे स्टोव पर पंप भरा जाता। शाम की चाय बनती। दोनों चाय पीते और फिर नित्य के सैर-सपाटे के लिये निकल जाते। झील के किनारे कच्ची पगडंडियों पर चलते। जाड़ों के मौसम में बर्फ गिरती तो ताजी गिरी बर्फ को रोंदते हुये चलते। बर्फ के गोले बना कर एक-दूसरे को मारते। माल रोड पर यूं ही निरर्द्यक चलने लगते। तल्लीताल से मल्लीताल तक नौकाविहार करते। झील के उत्तरी छोर पहाड़ी पर नैनादेवी के मंदिर चले जाते। घास की समतल पट्टी चाईना पीक पर जाकर टहलते। चीलचक्कर के घुमावदार मोड़ो पर सैर के लिये चले जाते।

सैर के बाद घर आकर लाल दहकते कोयलों पर आग तापते। रात्रि का भोजन करते और भोजन के बाद बंशीद्यार अंद्येरे कमरे में पहले जोर से हॅसता, फिर रत्ना को कस कर जकड़ लेता...

एक कमरे के निवास में रत्ना की जिन्दगी जितनी निर्विद्यन व शान्त द्यी, घर के बाहर स्द्यिति उतनी ही हलचल व तनावपूर्ण द्यी। अंग्रेजों का शासन अभी भी चल रहा द्या... । नैनीताल अॅग्रजों की बड़ी प्रिय जगह द्यी। अप्रैल महीने के शुरू होते ही अॅग्रेजों का आगमन यहॉ शुरू हो जाया करता। रत्ना उन्हें हैरत से एकटक ऐसे निहारा करती जैसे वो दूसरे ग्रह से आये प्राणी हो। बंशीद्यार टोकता। बंशीद्यार हर पल रत्ना का सामान्य ज्ञान बढ़ाने की कोशिश किये रहता द्या। रत्ना पहाड़ से आयी द्यी। बाहरी दुनिया का ज्ञान उसका न के बराबर द्या।

"पता है रत्ना, नैनीताल की खोज एक अँग्रेज ने की थी, **1841** में। उसका नाम बैरन था, चीनी मिल का मालिक था। आसमान में उड़ते हुये हवाई जहाज की खिड़की से उसने इन हरी पहाड़ियों से घिरी इस अदभुत झील को देखा था।"

"तुम्हें कैसे मालूम? तुम **1841** में पैदा थोड़ी हुये हो।"

बंशीधर ने एकदम से रत्ना के चेहरे पर देखा। उसके चेहरे पर खिंची शरारती मुस्कान देख वह उसे हल्के मुक्के से मारने लगा।

"किताबें किसलिये होती हैं? ऐसा करो रत्ना तुम भी थोड़ी सामान्य ज्ञान की किताबें पढ़ना शुरू कर दो।"

रत्ना रूवाँसे स्वर में बोली – "क्या-क्या करूँ? क्या-क्या सीखूँ? कल्याणी के पास जाकर पढ़ना-लिखना सीखूँ, रेडियों में खबरें सुनूँ कि देश में क्या हो रहा है? अब सामान्य ज्ञान की किताबें पढ़ने के लिये भी कह रहे हैं।"

"अरे, यह सब मैं तुम्हारे भले के लिये कहता हूँ," बंशीधर बोला। लेकिन रत्ना का ध्यान किसी हट्टे-कट्टे अँग्रेज की ओर आकर्षित हो गया था - घोड़े में सवार वह मल्लीताल की पहाड़ी उतर रहा था। आँखें फाड़े रत्ना उस अँग्रेज को घूर रही थी।

वैसे केवल अँग्रेज ही नैनीताल में नहीं आया करते थे। स्वतंत्रता संग्राम के वीर भारतीय सैनानी भी जब-तब यहाँ आकर अपने जोशीले धुआँदार भाषणो से यहाँ के प्राकृतिक शान्त वातावरण को स्पन्दित कर देते। यहाँ की ठंडी वादियों में आजादी की गर्म लहरे दौड़ने लग जाती। रत्ना को प्रान्तीय, राष्ट्रीय कितने ही दिग्गज नेताओं को देखने का अवसर मिला था। वो आते... धाराप्रवाह जोशीले भाषण देते... नैनीताल के निवासियों को उत्साहित करके चले जाते...

•• •• ••

लगभग एक वर्ष बाद... रत्ना महिलाओं की पंगत में सबसे आगे बैठे मंत्रमुग्ध दृष्टि से नेहरूजी, भारत के भावी प्रधानमंत्री, को एकटक निहारे जा रही थी। रूप के धनी, पतले नैननक्श वाले नेहरूजी चूड़ीदार पाजामा व अचकन पहने हुये थे। उन्हें देखने पूरी नैनीताल नगरी तो क्या, आस-पास की पहाड़ियों से भी चल कर भीड़ चाईनापीक के उस बड़े समतल से प्रांगण में एकत्र हो गई थी। उनके मंच पर पहुँचते ही तालियों की ऐसी गड़गड़ाहट शुरू हो गई कि नेहरूजी को बारबार अपने हाथों के संकेत से लोगों को शान्त करवाना पड़ा।

अपने सम्मुख विशाल जनसमूह को नेहरूजी ने निहारा, फिर कहना आरभ किया – "देश अब आजादी की कगार पर खड़ा है, लेकिन हमारी आजादी की जंग अभी खतम नहीं हुई। हमारा मकसद तभी पूर्ण होगा जब हमारे देश के एक-एक नागरिक, चाहे वह पुरूष हो या महिला, का उत्थान होगा। देश की आजादी के बाद हमारी लड़ाई का मुख्य आकर्षण देश की महिलाओं की शिक्षा और उनके अधिकारों के प्रति रहेगा।"

एक पल ठहर कर नेहरू जी थोड़े गंभीर भाव से बोले – "फ्रांसीसी आदर्शवादी, चार्ल्स फोरियर ने एक बार कहा था कि किसी मुल्क में किस अंश तक सभ्यता है, इसका निर्णय महिलाओं की सामाजिक स्थिति से किया जा सकता है। मतलब अगर आज हमें अपने देश के भविष्य का निर्णय करना है तो हमें अपनी महिलाओं की दशा देखनी होगी। हम जो भी भविष्य का निर्माण करेंगे, उसका निर्णय हमारी महिलाओं की स्थिति को देखकर ही होगा। मुझे यह स्वीकार करने में जरा भी हिचकिचाहट नहीं कि हमारी महिलाओं की स्थिति बेहद असंतोषजनक है। महिलाओं के विकास के लिये हमें बहादुरी से मुकाबला करना है। बुराई की जड़ पर चोट करना है। महिलायें बहुत से क्षेत्रों में अपने अधिकारों से वंचित हैं। यहाँ पर जो महिलायें मौजूद हैं," कहते हुये नेहरूजी महिलाओं की पंगत की ओर देखने लगे, रत्ना को लगा कि वे उसे ही देख रहे हैं, "उन्हें मैं याद दिलाना चाहूँगा कि महिलायें देश की उतनी ही सैनिक हैं, जितने कि पुरूष हैं। इसलिये मैं आशा करता हूँ कि महिलायें वर्तमान अन्याय और अत्याचारी सामाजिक प्रथाओं के विरूद्ध विद्रोह करेंगी। अपनी प्रगति में बाधक लोगों से संघर्ष करेंगी।"

एक पल ठहर कर नेहरूजी ने पुनः महिलाओं की पंक्ति की ओर देखा, रत्ना को फिर लगा कि उनकी नजरें उस पर गड़ गई हैं। वह संकुचित हो गई। नेहरूजी ऊँचे स्वर में सभी महिलाओं से प्रश्न करने लगे – "क्या तुम अत्याचारी सामाजिक प्रथाओं के खिलाफ विद्रोह करोगी?"

महिलायें खामोश रहीं। उन्हें खामोश देख नेहरूजी ने जोर से पूछा – "क्या तुम अपनी प्रगति के लिये संघर्ष करोगी?"

"हॉ करेंगे !" सहसा कल्याणी अपनी जगह पर खड़ी होकर चिल्लाई।

"हॉ करेंगे ! हॉ... " सभी महिलाओं ने तुरन्त स्वर मिलाया।

अन्य कई महिलायें भी आवेश में आकर अपनी जगहों पर खड़ी हो गई।

और... महिलायें जोश में आ गई। कल्याणी उनकी नेता थी। दूसरे दिन ही कल्याणी ने शिव मंदिर के प्रागंण में चलने वाली अपनी पाठशाला में सेना कर्मचारियों की पत्नियों व कुछ स्थानीय महिलाओं को बुला कर एक सभा का आयोजन किया।

सभी महिलायें गुप-चुप बिना पुरूषों को बताये आजादी व नारी मुक्ति के जलूस निकालेगी और पुरूषों को चौंका देंगी।... बड़ी देर तक इस विचार पर मंत्रणा होती रही...

सैनिकों की पत्नियॉ अलग हट गई।

– "नहीं, हम जलूस नहीं निकाल सकते।"
– "कैसे निकाल सकते हैं हम जलूस... हमारे पतियों की नौकरियॉ खतरे में पड़ जायेगी।" "मैं भी तो एक सैनिक की बीवी हूँ," कल्याणी बोली।

कैप्टन शर्मा की पत्नी उर्मिला सपाट शब्दों में बोली – "हम आपकी नकल नहीं कर सकते।"

'हॉ' मिलाते हुये उर्मिला की तरफ सैनिकों की पत्नियों का सारा दल हो गया।

मोर्चे पर अपने को अकेले देख कल्याणी दलीलें देने लगी – "अरे भई, हमारे पति अगर आर्मी में काम कर रहे हैं तो हम भी अॅग्रेजों के गुलाम हो जायें? एक पुलिस ऑफिसर का बेटा बदमाश हो सकता है। एक देशद्रोही की पत्नी देशप्रेमी हो सकती है।"

सहसा रत्ना कॉपते पैरों के साथ खड़ी हो गई। कल्याणी उससे बोली – "रत्ना, तुम जलूस निकालोगी?"

रत्ना ने सहमते हुये सहमति में गर्दन हिलायी। सैनिकों की पत्नियॉ रत्ना को आश्चर्य से देखने लगी। रत्ना ने कनखियों से औरतों के चेहरों के भाव देखे।

हवलदार गोस्वामी की पत्नी सरस्वती मुँह बनाते हुये बोली – "यह पहाड़न जलूस निकालेगी।" रत्ना ने उसे घूरा तो वह मृदुल स्वर बनाते हुये बोली – "रत्ना, तुम बैठ जाओ। ऐसी हालत में तुम कहॉ जलूस निकालोगी। फिर पन्तजी भी तुमसे नाराज होंगे। फौजी और फौजियों की बीवियां जलूस नहीं निकाला करती हैं। और अपनी हालत भी तो देखो।"

औरतें उसके पेट को घूरने लगी – गर्भावस्था का बढ़ा हुआ पेट।....

"नहीं, मुझे कल्याणी बहनजी के साथ जलूस निकालना है," रत्ना एक दृढ़ता से बोली।

औरतें अवाक रह गई। कल्याणी खुश हो गई कि कोई तो तैयार हुआ जलूस निकालने के लिये।

रत्ना का साहस देख कर चार स्थानीय महिलायें भी जलूस निकालने के लिये तैयार हो गई।

एक रत्ना और चार स्थानीय महिलायें...। कल्याणी ने पॉच औरतों के दल के साथ जलूस निकालने की ठान ली। एक नारा रचा। सभी को कंठस्थ करवा लिया। जलूस का मार्ग तय किया गया – शिव मंदिर से दर्शन-घर, लाइब्रेरी, मेन बाजार व अशोक-टॉकीज से होते हुये लेक-ब्रिज के चौराहे पर जायेगा। फिर वहॉ से चुंगी ऑफिस। चुंगी ऑफिस से हनुमानगढ़ी होते हुये चील-चक्कर तक जायेगा। चील-चक्कर पर घुमावदार मोड़ों पर चक्कर लगा कर सभी महिलायें वहॉ से वापसी पर अपने-अपने घरों का मार्ग पकड़ लेंगीं। इस तरह से वे मल्लीताल से तल्लीताल के प्रमुख स्थानों से निकलेंगी।

दस बजे प्रातः पॉच औरतों का दल कल्याणी के नेतृत्व में ध्वज को थामे शिव मंदिर से निकल पड़ा। आगे-आगे कल्याणी... और पीछे-पीछे रत्ना समेत पॉच औरतों का छोटा सा झुंड... ।

कल्याणी शेरनी की तरह दहाड़ती – " कौमी एकता..."

औरतों का सामूहिक बुलन्द स्वर गूँजता – "अमर रहे !"

कल्याणी चीखती – "नया इन्कलाब..."

औरतें एक स्वर में चिल्लाती – "आया है !"

कल्याणी– "नारी शक्ति का... "

औरतें – "उदय हुआ है !"

"भारतमाता की जय !" कल्याणी समेत सभी औरते एक स्वर में चीखती।

"नया इन्कलाब आया है, नारी शक्ति का उदय हुआ है। भारतमाता की जय !..." औरतें जोशीली बुलन्द आवाज में निरन्तर नारे लगा रही थी। लोग अपने-अपने घरों, कार्यालयों व दुकानों से निकल आये। स्थानीय महिलायें अमीर-गरीब, जवान-बूढ़ी, शिक्षित-अशिक्षित सभी एक-एक करके कल्याणी के जलूस में सम्मिलित होती गई। आर्मी स्टाफ की औरतें, जो पहले पीछे हट गई थी, भी जोश में आकर बेधड़क जलूस में शामिल हो गई। जलूस का आकार बढ़ता गया...। धीरे-धीरे जलूस ने एक विराट रूप धारण कर लिया।

पुरूष एकदम हतप्रभ, चौकन्ने से महिलाओं को नारे लगाते हुये घूरने में लगे थे। महिलायें नारे लगाते हुये हतप्रभ व स्थिर खड़े पुरूषों को पार करते हुये आगे बढ़ रही थी। बंशीधर भी अन्य लोगों के साथ अपने आर्मी के ऑफिस से निकल कर जलूस के मार्ग पर आ खड़ा हो गया था। अचरज से ऑखें फाड़े रत्ना को घूर रहा था। कभी वह ठगा-सा रत्ना की ऑखों में झॉकता तो कभी उसके उदर को घूरता, जिसमें शिशु ने आकार लेना शुरू कर दिया था और उसका उदर बढ़ा हुआ दृष्टिगोचर होने लगा था। रत्ना अधरों पर हल्की मुस्कुराहट बिखेरे, बंशीधर से नजरें मिलाते हुये अपनी आवाज को और तेज कर रही थी। बंशीधर नाराज नहीं हो रहा था। हतप्रभ, प्रसंशनीय निगाहों से उसे सराह रहा था। रत्ना ऊँची आवाज में नारे लगाते हुये औरतों के दल के साथ बंशीधर की बगल से गुजरते हुये आगे बढ़ गई। बंशीधर हक्का-बक्का अपनी जगह खड़ा ही रह गया।

रत्ना ने आज अपनी सभी धोतियों में सबसे कीमती धोती पहनी थी। बंशीधर ने उसके गॉव से आने पर मल्लीताल के मेन-बाजार से खरीदी थी। गहरी हरी सूती धोती में लिपटी रत्ना की सुडौल देह एक बेल की भॉति प्रतीत हो रही थी। ऊपर कन्धों पर झूलता पश्मीने का श्वेत शॉल जबरदस्त वैषम्य दिखा रहा था। यह शॉल उसके पिता ने उसे शादी में दिया था। कोई बहुत धनाढय उसके पिता नहीं थे। फिर भी परम्परानुसार बेटी के विवाह पर देने के लिये गिनी-चुनी चन्द वस्तुयें उन्होंने जुटा दी थी। एक सोने की नथ, एक ट्रंक व चन्द नये वस्त्र उन्होंने टिहरी से खरीदे थे। पश्मीने का पलंगपोश व शॉल उन्होंने सैल से गंगोत्री जाते हुये मार्ग पर बेच रही एक तिब्वतन औरत से खरीदा था। किसी-किसी वर्ष, गर्मी के मौसम में ये लोग अपने तिब्वत प्रदेश से आकर गंगोत्री के मार्ग पर पर्यटकों को पश्मीने की चादरें, शॉल बेचने लगते थे। उन दिनों तिब्वत, चीन के अधीन नहीं था। भारत व तिब्वत की सटी सीमायें निष्फिक खुली रहती थी। छोटे-मोटे व्यापारी पहाड़ों के इधर-उधर व्यापार करने के लिये बड़ी सहजता से चले और आते थे। अच्छा व्यापार चलता था उन दिनों।

रत्ना एक बेहद खूबसूरत स्त्री थी – औसत से थोड़ा ऊँचा कद, तराशी हुई सुगढ़ देह, साफ-सुथरी त्वचा, गौरवर्ण, आनुपातिक नैन-नक्श और काले घुंघराले केश। सौन्दर्य के सभी मापदण्डों से वह परिपूर्ण थी। परन्तु शिक्षा का अभाव व पहाड़ के विराट अभाव ग्रस्त परिवेश में उसकी परवरिश होने से उसके व्यक्तित्व में एक तेज, एक दबंगपन नहीं था। हर समय वह दबी, सहमी-सी रहती थी। एक बेवजह की झिझक उसे हर वक्त घेरे रखती थी। कोई भी उस पर आसानी से आदेश जमा सकता था, उस पर प्रभुत्व कर सकता था।

खैर औरते छिछली पहाड़ियों, घाटियों व सरोवरों को पार करती हुई निरन्तर आगे बढ़ती गई। चीख-चीख कर कंठ से नारे लगाती गई। कुछ घंटो के लिये नैनीताल के लगभग सभी घर औरतों से रिक्त हो गये। पुरूषों को ही घर में बच्चे वगैरह सॅभालने पड़े।

नारे लगाते-लगाते औरते चील चक्कर, जलूस के अन्तिम लक्ष्य तक पहुँची। वहॉ थोड़ी देर विश्राम किया। फिर वापस होते हुये सभी ने अपने-अपने घरों का रास्ता पकड़ लिया। सुबह दस बजे के निकले सांय के चार बज गये। रत्ना अपने बाड़े की सभी औरतों के साथ घर लौट आयी। वह बुरी तरह थक गई थी। सीधे घर में घुसते ही पंलग पर निढाल गई।

बंशीधर पहले ही घर लौट चुका था। उसे देखते ही बोला – "आज तुम औरतों ने क्या कयामत निकाल दी ! किसी भी घर में कोई औरत नहीं। सभी सड़क पर।"

रत्ना मौन रही।

"थक गई हो क्या?"

रत्ना मौन...।

"चाय पियोगी?"

रत्ना ने स्वीकृति में गर्दन हिला दी।

बंशीधर रसोई में जाते हुये व्यंग्य भरे स्वर में बोला – "अब तो भई घर के काम हमें ही करने पड़ेंगे। नया इन्कलाब आ गया है। नारी शक्ति जाग गई है।"

रत्ना पलंग पर लेटे-लेटे यूँ ही कमरे की छत को ताकते लगी। अनायास ही छत में दो आकृतियॉ बनने लगी – एक नेहरू जी की व दूसरी कल्याणी की। उसके कोमल मस्तिष्क पर नेहरू जी के भाषण और कल्याणी के दबंग व्यक्तित्व का गहरा प्रभाव पड़ गया था। नेहरू जी के शब्द रह-रह कर उसके मस्तिष्क पर कौंधे जा रहे थे – "तोड़ दो उन पुरानी दकियानूसी परम्पराओं को जो तुम्हारी उन्नति के मार्ग मे बाधक...।"

रत्ना मन ही मन बुदबुदाई - "नेहरू जी हर औरत को कल्याणी की तरह बनाना चाहते हैं।" कल्याणी का व्यक्तित्व उसके नेत्रो के सम्मुख तैरने लगा... कितनी तेज बुद्धि की है वह... शुद्ध हिन्दी बोलती है। अॅग्रेजी भी बोल लेती है । पुरूषों से बेधड़क, बेझिझक बात कर लेती है। इधर वह बेचारी... पुरूषों के सामने तो दूर, महिलाओं के सामने ही जवान लड़खड़ाने लगती है। अॅग्रेजी तो दूर, ढ़ंग से हिन्दी भी नहीं बोली जाती। पहाड़ी प्रभाव आता है। अगल-बगल रह रही ये जवानों की औरते उसे बोलते देख जोरों से हॅसा करती हैं? उसकी बोली का हमेशा ही मजाक बनाती हैं। सबसे ज्यादा मजाक राजस्थान वाली गोस्वामी बनाती है। इसलिये वह उनसे बात करते हुये कतराया करती है। कभी भी उनकी गोष्ठी में गपबाजी के लिये शामिल नहीं होती। लेकिन कल्याणी कभी उसका उपहास नहीं बनाती। बल्कि, वह बड़ी ध्यान से उसकी बातों को सुनती है। आज जब वह कल्याणी के साथ मिलकर बॉस के डन्डे पर झन्डे को बॉध रही थी, तो कल्याणी उसके चेहरे को ध्यान से निहारते हुये कहने लगी – "रत्ना, तुम कितनी सुन्दर हो? तुम्हारा रंग एकदम गोरा व त्वचा बिल्कुल साफ है। काश तुम्हारा गोरा रंग थोड़ा मुझे मिल जाये।"

"काश कल्याणी दीदी, तुम्हारी बुद्धि व निडरपन थोड़ा मुझे मिल जाये," रत्ना बुदबुदाई।

"**यह** लो चाय !..." बंशीधर ने चाय का प्याला बढ़ाया। रत्ना अनमने भाव से उठी। अनिच्छा से चाय का प्याला थाम लिया। बंशीधर एक हाथ से कुर्सी पलंग के पास खींच कर, पीठ के बल उस पर आराम से बैठ कर चाय पीने लगा।

रत्ना की धोती को निहारते हुये बोला – "देखो, तुम इस नई धोती को विना बदले ही लेट गई। कैसी इसमें सिलवटें पड़ गई हैं !"

रत्ना चाय का प्याला थामे विचारो में खोई रही...। चाय से भाप उड़ती गई।...

बंशीधर ने क्षण भर उसे ताका, खीझे स्वर में बोला – "अरे, जब से नारे लगा कर आयी हो, इतनी गंभीरता से क्या सोच रही हो...? हम ने मान लिया है कि नारी शक्ति जाग गई है। चलो, अब चाय पीयो। ठंडी हो रही है।"

रत्ना मुस्कुरा पड़ी। चाय के दो-तीन घूँट भर कर कहने लगी – “ मैं कल्याणी के बारे में सोच रही हूँ । नेहरू जी हर औरत को कल्याणी बनाना चाहते हैं।” रूवाँसे स्वर में बोली – “ मैं कहाँ कल्याणी बन सकती हूँ? वह तो बहुत पढ़ी-लिखी है। सुना है उसने कल्कत्ता के कालिज से डिगरी ली है। मैं तो केवल पाँच जमात तक ही स्कूल गई हूँ। अब, कल्याणी के बदौलत ही थ्होड़ा ढंग से पढ़ने लग गई हूँ, नहीं तो पहले अक्षर मिला-मिला कर मुश्किल से पढ़ पाती थ्ही। कल्याणी की मैं क्या बराबरी... ”

“तुमने एक बात और सुनी कल्याणी के बारे में कि वह किसकी लड़की है?” बंशीध्यार ने टोका।

“ऊँ हूँ !” रत्ना निर्लिप्त भाव से बोली। “किसकी लड़की है वह?”

“वह एक बहुत बड़े कान्तिकारी की बेटी है। पूरे बंगाल में उसके पिता ने अँग्रेजी हुकुमत के खिलाफ बगावत छेड़ी हुई है। हमेशा उसके पिता के हाथ्हों में बन्दूक रहती है।”

रत्ना कोई खास प्रतिकिया व्यक्त किये बगैर निर्लिप्त भाव से चाय के घूँट भरती रही।

बंशीध्यार उसे निहारते हुये एक शरारती मुस्कुराहत से पूछने लगा – “तुम्हारे पिताजी के हाथ्हो में हमेशा क्या रहती है?

“क्या रहती है मेरे पिताजी के हाथ्हो में?” रत्ना ने हतप्रभ होते हुये उलटा प्रश्न किया।

“घन्टी !... पूजा की घन्टी !...” बंशीध्यार उन्मुक्त हँसते हुये बोला। “तुम एक पुजारी की बेटी हो और कल्याणी एक कान्तिकारी की ! अन्तर तो बेशक होगा ही तुम दोनों में।”

“मेरे पिताजी किसी मामूली मंदिर के पुजारी नहीं हैं। गंगोत्री के मन्दिर के पुजारी है, जहाँ से गंगा नदी निकलती है,” रत्ना तुनक कर बोली।

“चाहे कहीं के भी हो, बजानी तो उन्हें घन-घन घंटी ही पड़ती हैं। कल्याणी के पिताजी के तरह ठाँय-ठाँय बन्दूक तो नहीं चलाते।”

रत्ना मुँह बना कर खामोश बैठ गई।

बंशीध्यार सध्हो शब्दो में बोलने लगा – “देखो, कल्याणी के पिताजी के हाथ्हों में थ्ही-नॉट-थ्ही बन्दूक रहती है, तुम्हारे पिताजी के हाथ्हों में पूजा की घन्टी रहती है। उसके पिताजी के हाथ्ह दुश्मनों के लाल खून से रंगे रहते है और तुम्हारे पिताजी के हाथ्ह... लाल रोली से सने रहते हैं।”

कहते-कहते बंशीध्यार ठहाका मार कर बड़ी जोरों से हँसने लगा। रत्ना ने और मुँह बना लिया।

एकाएक बंशीध्यार गंभीर होते हुये रहस्यमय अंदाज में बोला – “वैसे सिर्फ यह ही अन्तर नहीं है तुम दोनों के बीच में। एक और बहुत बड़ा अन्तर है तुम दोनो में...”

रत्ना चकित-सी उसे देखने लगी ।

“...कल्याणी एक ऑफिसर की बीवी है और तुम एक हवलदार की... हवलदार बंशीध्यार की... हा ! हा !! हा !!!...”

“चल हटो !” रत्ना शरमाते हुये बोली। मारने के लिये बिछोने से तकिया उठा लिया। बंशीध्यार भाग खड़ा हुआ। रत्ना बिस्तर से उतर कर उसके पीछे दौड़ी।

“अरे-अरे, भागो नहीं ! जरा बच्चे का तो ख्याल करो !”

रत्ना सहम गई। सध्हो कदमों से ध्यीरे-ध्यीरे वापस पलंग पर बैठ गई। बंशीध्यार आगे बढ़ा। अपनी कमीज की जेब से एक पत्र निकाल कर उसकी ओर बढ़ा कर, मुस्कुराते हुये बोला – “लो भई, मुबारक हो ! भगवान ने तुम्हे माँ से पहले एक बहन बना दिया।”

“क्या? पिताजी का बच्चा हो गया?” पत्र खींचते हुये रत्ना अचरज से बोली। जल्दी से खोल कर पढ़ने लगी:

प्रिय चिरंजीव बंशीध्यार एवम सौभाग्यवती बेटी रत्न,

ईश्वर दोनों तरफ कुशल मंगल बनाये रखे। तुम्हें यह जानकर हर्ष होगा कि परसो सायं सात बजे तुम्हारा भाई हुआ है। जन्म शुभ समय पर हुआ है। नक्षत्र रेवती है, राशि कर्क। शुक-शनि अपने उचित स्थ्हानों पर हैं। स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार सभी दशायें अनुकूल हैं।

तुम्हें शायद इस अवस्था में जब तुम्हारी अपनी ही सन्तान होने वाली है, बहन बनना अटपटा लग रहा हो। किन्तु कुछ होनी ऐसी होती हैं कि मनुष्य का वश नहीं होता। सब विधि का विधान होता है। तुम दोनों से गहरी उम्मीद है कि तुम इस बच्चे पर अपनी छत्र-छाया सदा बनाये रखोगे।

तुम्हारी माँ स्वस्थ है। तुम दोनों को अपना आर्शिवाद भेज रही है। अगले माह मन्दिरों के द्वार तीर्थयात्रियो के लिये खुल रहे है। फिर मैं ऊपर गंगोत्री लौट जाऊँगा। अगर पत्र विलम्ब से लिखोगे तो गंगोत्री के पते पर भेजना।

इतिश्री।

तम्हारा पिता
शम्भूप्रसाद।

रत्ना ने तीन बार पत्र पढ़ा। एक ठंडी-सी उच्छवास छोड़ते हुये पत्र तकिये के नीचे रख दिया। दरअसल इतनी अटपटी बातों को झेलने के बाद भाई का जन्म उसे बिल्कुल भी अटपटा नहीं लग रहा था। बल्कि भाई का जन्म उन सभी अटपटी घटनाओं का एक सुखद अन्त प्रतीत हो रहा था।

लगभग तीन वर्ष पूर्व रत्ना को देवलगढ़ से सैल, अर्थात उसके श्वसुर-गृह से पितृ-गृह बुलाया गया था। प्रताप, उसके पिता के ताऊजी के लड़के का लड़का, मतलब रत्ना का तीसरी पीढ़ी का भाई, उसे लिवाने आया था। उसके पिता ने ही उसे भेजा था। वे दूसरा विवाह करने जा रहे थे। यह खबर उसके ससुराल में एक मखौल बन गयी। लोग खूब हँस रहे थे। सास रूकमणि तो उसके पिता को खुलकर धिक्कारने लगी थी – "इतने सालों बाद, इस उमर में क्या सूझी उन्हें शादी करने की? वो तभी दूसरी शादी कर लेते जब तेरी माँ मरी..." रत्ना ने सास को घूरा तो वह झिझक गई, शब्दों को सँभालते हुये बोली – "जब वो जवान थे। अब इस उमर में शादी करके हँसी की बात कर दी उन्होंने।"

गाँव के कुछ लोग भर्त्सना कर रहे थे तो कुछ मजाक। गाँव का हरफनमोला युवक भोला हँसते हुये सीधे रत्ना से बोला था – "ओ हो... रत्ना बौजी, तुम्हारे पिताजी को अपना दूसरा ब्याह रचाना था, तभी उन्होंने झटपट छोटी उमर में ही तुम्हारी शादी कर तुम्हे ससुराल भेज दिया।"

"यह तो बड़ी अटपटी बात हो गई। पहले बेटी की शादी, फिर पिता की," शकुन्तला ताई मुँह बिदकाते हुये बोली।

रत्ना को भी अपने पिता का पुनः विवाह करना अटपटा लग रहा था, लेकिन वह लोगों की तरह अपने पिता को खुलेआम कोस नहीं सकती थी। उसने चुपचाप अपने कुछ कपड़े एक झोले में डाले। लंबे पहाड़ी रास्ते के लिये थोड़ा खाना पोटलियों में बाँधा। रूकमणि से इजाजत लेकर वह प्रताप के साथ अपने पिता की शादी में शामिल होने के लिये चल पड़ी।

एक नवयौवना को अपने पिता की पत्नी के रूप में देखकर वह बुरी तरह चौंक गई।

"यह तुम्हारी माँ है," उसके पिता जब उससे बोले तो उसे और अटपटा लगने लगा। माँ शब्द कहने के लिये वह कितनी लालायित रहा करती थी? आज जब अवसर मिल रहा है, तो इस शब्द को कहते हुये उसकी जुबान तालू लग गई। कैसे वह अपने हमउम्र स्त्री को माँ पुकार ले?

"यह तुम्हारी बेटी है," उसके पिता ने अपनी नई पत्नी को उसका परिचय दिया। नई पत्नी भी एकदम असहज हो गई। जो नवयुवती अभी चन्द घन्टे पूर्व ही विवाह सूत्र में बँधी है, एक तरूणी को अपनी बेटी कैसे मान ले?

रत्ना व उसकी सौतेली माँ के बीच एक अजीब, बेहद असहज-सी परिस्थिति बन गई। दोनों नजर उठा कर भरपूर दृष्टि से एक-दूसरे को देख तक नहीं पा रहे थे। माँ-बेटी का परस्पर परिचय सामान्य परिस्थितियों में हो भी कहाँ सकता है? कभी भी बेटी को उसकी माँ से परिचित नहीं करवाना पड़ता है, न कभी किसी माँ को उसकी बेटी के परिचय की जरूरत पड़ती है। उनका परिचय तो एक-दूसरे से बहुत पहले हो जाता है, जब बेटी की काया माँ के गर्भ में छुपी आकार ले रही होती है। जब कोशिकाओं के झुण्ड से उसके कोमल व मुलायम अंग फूटने लगते हैं और माँ को अपने पेट में एक मीठा-सा शूल अनुभव होने लगता है। बेटी के जन्म से बहुत पहले

ही दोनों एक-दूसरे को जान चुके होते है। यह तुम्हारी माँ है, यह तुम्हारी बेटी... शायद इस तरीके से परिचय करवाना उनके रिश्ते की गरिमा को भंग करना है।

"फिर से क्या सोचने लगी हो तुम? बंशीधार ने रत्ना की आँखों के सामने उगंलियों को फिराते हुये पूछा।

रत्ना अपनी सोच से बाहर निकली।

"अपने भाई के विषय में सोच रही हो?" बंशीधार ने पूछा।

"नहीं, भाई को जन्म देने वाली माता के विषय में सोच रही हूँ," रत्ना गंभीर भाव से बोली।

"भाई की माता के विषय...?" बंशीधार असमंजसता से बुदबुदाया।

रत्ना बोली – "पहले मैं उससे हमेशा नफरत करती थी। लेकिन आज भाई के जन्म की खबर सुनकर उससे नफरत नहीं, उस पर स्नेह आ रहा है। नेहरूजी के भाषण को ध्यान करके तो मुझे उस पर दया आ रही है। बेचारी, इतनी जवान... एक बूढ़े विधुर के साथ ब्याह दी गई।"

"मैने तो सिर्फ एक ही बार देखा है तुम्हारी सौतेली माँ को... जब यहाँ आने से पहले हम तुम्हारे गाँव गये थे तुम्हारे पिताजी से मिलने," बंशीधार बोला। "हाँ, तुम्हारे पिताजी की तुलना में जवान तो लगती ही है।"

"पता है उसकी शादी पिताजी से सिर्फ इसलिये हुई कि वह मंगली थी और उसकी अशलेषा भी थी। ऐसी लड़कियाँ सास के लिये भी खराब होती हैं और बड़े भाई के लिये भी। पिताजी की न ही माँ थी और न ही कोई बड़ा भाई। इस कारण उसकी जन्मपत्री पिताजी के साथ जुड़ गई और उसके घर वालो ने जबरदस्ती उसकी शादी पिताजी के साथ करदी।"

"जबरदस्ती !" बंशीधार ने आश्चर्य व्यक्त किया।

"नहीं तो भला कोई जवान लड़की किसी बूढ़े आदमी से अपनी मर्जी से शादी करती है? उसने खुद मुझसे कहा कि वह एक शादीशुदा बेटी के बाप से शादी करना हरगिज नहीं चाहती थी। परन्तु उसके घर वालों ने जबरदस्ती करी क्योंकि वह इक्कीस साल की हो गई थी। उसके एक छोटे भाई व एक छोटी बहन की शादी भी हो गई थी।"

"अमा यार, तुम फादर-इन-लॉ को बार-बार बूढ़ा मत कहो," बंशीधार मुस्कराते हुये बोला। "क्या उम्र होगी उनकी?"

"पिताजी... होंगे चवालीस-पैंतालीस के !"

"इसका मतलब शादी के समय इकतालीस-बयालिस के रहे होंगे? तब तो फादर-इन-लॉ जवान ही हैं। वह तो हम हिन्दुस्तानी अपने को बहुत जल्दी बूढ़ा समझने लगते हैं। इन अँग्रेजों को देखो – साठ साल तक अपने को एकदम बाँका जवान समझते हैं। गोल्फ खेलते हैं, स्वीमिंग करते हैं, दौड़ लगाते हैं, बॉय-फ्रेंड और गर्ल-फ्रेंड बनाते है। जिन्दगी का पूरा मजा लेते है। हमेशा खुश रहने की कोशिश किया करते हैं, और हम खुशी के मौके पर भी दुःख खोजते हैं।"

थोड़ी देर में बंशीधार पूछने लगा –"ब्रदर-इन-लॉ के जन्म की खुशी में हलवाई की दुकान जलेबी खाने चले?"

रत्ना मुस्कराने लगी। गर्दन हिला कर मौन स्वीकृति दी। पलंग से झट से उठकर धोती ठीक की, बालों को सँवारा, चप्पलें डाल कर तैयार हो गई। बंशीधार ने भी अपने पहने स्वेटर को नीचे खींच कर ठीक किया, शर्ट के कॉलर ठीक किये, पैरों पर जूते ताने, बालों पर कंघी फेरी। मेज से ताला-चाबी उठा कर दोनों कमरे से बाहर निकल आये।

बाहर आँगन में छः-सात बच्चे खेल रहे थे। औरतें एक-दूसरे से गुफ्तगू में मशगूल थी। आज एक अहम बात उनके जीवन में घटित हुई थी – महिलाओं का जलूस निकला था। अन्ततः वे भी उस जलूस का एक हिस्सा बनी थी। सम्भवतः उसी के ऊपर चर्चा हो रही थी।

रत्ना व बंशीधार को देख, वे आपस की गुफ्तगू को छोड़ उन दोनों को ताकने लगीं। रत्ना ने उनकी तीखी नजरों को एकदम अनदेखा किया। बंशीधार ने कमरे को बन्द कर साँकल में ताला लगाया। बरामदे, आँगन, कच्चे मैदान को पार कर दोनों अहाते से बाहर आने लगे। पीछे से मृदुला डाँडेकर का स्वर कौंधा – "अभी नई-नई शादी हुई है न, इसलिये हर समय मस्ती में रहते हैं।"

"नहीं," परमजीत परवाना बोली, "शादी को तो चार-पाँच साल हो गये। लेकिन साथ पहली बार रह रहे हैं।"

“अरे बच्चा हो जायेगा तो सारी मस्ती निकल जायेगी,” सरस्वती गोस्वामी बोली। सभी औरते जोर से खिलखिला पड़ी । बंशीद्यार ने रत्ना को देखा और रत्ना ने बंशीद्यार को, दोनों मुस्कुरा पड़े।

अहाते से बाहर निकल, लाल ईटों की सीढ़ियॉ उतर दोनों झील के किनारे पगडंड़ी पर आ गये।

क्षितिज पर पश्चिम की पहाड़ियों के पीछे अस्त होते सूर्य का प्रकाश एकदम लाल हो गया द्दाा। लाल प्रसारित प्रकाश उस तरफ की पहाड़ियों को प्रदीप्त कर रहा द्दाा। पूर्व की पहाड़ियों में सन्ध्या का अन्धाकार घिरने लगा द्दाा। झील में लोग नौकायान कर रहे द्दो।

झील के किनारे कच्ची पगडंडी पर कुछ देर चलने के उपरान्त रत्ना व बंशीद्यार ने चढ़ाई पार की और माल रोड पर पहॅुच गये। माल रोड पर कुछ दूर चल कर घनश्याम हलवाई की दुकान पर रूक गये। घनश्याम हलवाई लाल भट्टी पर चढ़ी बड़ी-सी कड़ाई में जलेबी तल रहा द्दाा। भट्टी की तेज आग से उसका गोरा रंग तप-तप कर तॉबे की तरह हो गया द्दाा। बंशीद्यार को देख कर उसने मुस्कराते हुये सलाम किया। बंशीद्यार के उससे दोस्ताना सम्बन्ध्या द्दो।

घनश्याम हलवाई के अलावा बंशीद्यार की मल्लीताल मेन बाजार पर आनन्द वस्त्र-भन्डार के तिवाड़ी लोगों से तद्दाा सकलानी चप्पल व जूतों की दुकान वालो से भी मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध्या द्दो। यह तिवाड़ी वशंज गढ़वाल व कुमाऊं के मिश्रण द्दो। उनके कपड़े का व्यापार नैनीताल, अल्मोड़ा के अलावा गढ़वाल के जनपद पौड़ी के कुछ ग्रामों जैसे श्रीनगर, कर्णप्रयाग, गौचर इत्यादि में भी फैला हुआ द्दाा।

सकलानी चप्पल व जूतों की दुकान के सकलानी लोग मूलतः श्रीनगर गढ़वाल से द्दो। वैसे इनके पूर्वज अवद्दा से गढ़वाल में आकर बसे द्दो। फिर नैनीताल आकर द्यांद्याा करने लगें। बरेली व लखनऊ से जूते-चप्पले लाकर वे नैनीताल में बेचा करते। इसके अतिरिक्त तिब्वती औरतों से भी वे छोटा-मोटा ठेका ले लिया करते द्दो। तिब्वती औरतें ऊनी द्यााागों से हाद्दों की बनी गर्म जूतियां इन्हें ठेके पर दिया करती द्दाी। ऊनी द्यााागों की रंग-बिरंगी, खूबसूरत, गर्म जूतियों को अपनी दुकान पर सजा कर बेचा करते द्दो जोकि अनायास ही ग्राहकों को आकर्षित कर लेती द्दाी। नैनीताल के प्रत्येक घर में इन गर्म जूतियों की कम से कम दो-तीन जोड़ियां पड़ी रहती द्दाी। जाड़ो में ठंडे व नंगे फर्श पर ये बड़ा आराम पहॅुचाती द्दाी। रत्ना ने भी अपने लिये घर में पहनने के लिये एक जोड़ी खरीदी हुई द्दाी।

बंशीद्यार की तिवाड़ी व सकलानी लोगों से अपनी गढ़वाली बोली में सहुलियत से बात हो जाती द्दाी। तिवाड़ी व सकलानी दोनों अच्छी गढ़वाली बोल लेते द्दो। परन्तु घनश्याम विष्ट उससे अपनी कुमाऊंनी बोलता द्दाा। वैसे तो गढ़वाल व कुमाऊं के पहाड़ व यहॉ की बोलियां भी एक दूसरे के प्रतिरूप हैं, परन्तु भाषा का जरा-सा भेद भी व्यापक अन्तर कर देता है। अतः बंशीद्यार घनश्याम विष्ट से अपनी गढ़वाली में बात करता द्दाा और घनश्याम विष्ट बंशीद्यार से अपनी कुमाऊंनी में। दोनों एक-दूसरे के स्वर को अच्छे से समझ जाते द्दो।

रत्ना को वेंच पर बैठा कर, बंशीद्यार घनश्याम विष्ट के पास जाकर उससे बात करने लगा। वेंच में अकेली बैठी रत्ना को दो-तीन युवक ऑखें फाड़-फाड़ कर घूरने लगे। घनश्याम हलवाई के यहॉ काम करने वाला लड़का किशोर भी उसे लगातार घूरे जा रहा द्दाा। वह सभी उसके यौवन व सुन्दरता को निहार रहे द्दो जोकि गर्भावस्द्दाा में और भी दमका हुआ द्दाा; या फिर उन्होंने सुवह जलूस में उसे झन्डे को पकड़ें ऊॅचे स्वर में नारे लगाते हुये देख लिया द्दाा, जिससे वह उनके लिये एक आकर्षण बनी हुई द्दाी। कारण कुछ भी हो, उनके इस तरह से घूरने से वह सकुचा गई। सुवह जब लोग घूर रहे द्दो तो कोई बात नहीं। तव वह समूह में चल रही द्दाी, जलूस का एक हिस्सा द्दाी। पर इस समय वह इस छोटी-सी दुकान में बैठी एकमात्र औरत... उसे उन युवकों का घूरना बड़ा असहज लगने लगा। वह उठकर बंशीद्यार के पास चली आ गई।

उसे देखते ही घनश्याम हलवाई प्रशंसनीय शब्दों में बोला – “बहन, आज तो तुम औरतों ने पूरी कान्ति ला दी। ऐसा कभी नहीं हुआ नैनीताल में।”

रत्ना कुछ बोल न सकी। बस शरमा कर रह गई।

“वह हैं न,” बंशीद्यार घनश्याम हलवाई से बोला, “मेजर बनर्जी की पत्नी कल्याणी देवीजी ! बस उन्हीं की वजह से निकला यह जलूस। बड़ी जबरदस्त महिला हैं वह !”

"बिल्कुल सही कहा," घनश्याम हलवाई झरने से जलेबियों को निकालते हुये बोला, "नेहरूजी के सामने भी वह कैसे खड़ी होकर चिल्लाने लगी थी कि हम अपनी उन्नति करेंगे। हम अपनी तरक्की... ।"

सहसा बंशीधर को जैसे कुछ ध्यान आया। वह रत्ना से पूछने लगा – "तुम उठकर यहाँ क्यों आ गई?"

रत्ना कुछ बोल पाती कि घनश्याम हलवाई एकदम से बोला – "हाँ-हाँ चल कर बैठो बहन, बस तैयार हो गई जलेबी।"

रत्ना ने कस्तूरी रंग की कड़क, मिष्ट, रसदार जलेबियों को घूरा। किशोर ताँबे की एक ट्रे में जलेबियों को सजाने में लगा था।

बंशीधर ने पाव किलो जलेबी व पाव-पाव सेर गर्म दूध का ऑडर दिया और रत्ना के साथ आकर बेंच पर बैठ गया।

किशोर उनके लिये दो प्लेटों में गर्म जलेबी तथा पीतल के दो लम्बे गिलासों में शुद्ध गर्म दूध ले आया। जलेबी इस कदर गर्म थी कि खाते हुये उनके हाथ-मुँह जलने लगे। परन्तु उन्होंने न अपने हाथों की परवाह की और न ही अपने मुँह की। एक-एक करके उन्होने सारी जलेबी खत्म करी। ऊपर से गर्म-गर्म दूध पिया। बंशीधर ने घनश्याम बिष्ट के पास जाकर पैसों का भुगतान किया। फिर दोनों निष्फिक माल रोड पर टहलने लगे।

टहलते-टहलते वे तल्लीताल से लेक-ब्रिज पर आ गये। लेक-ब्रिज के नीचे झील का पानी लहरा रहा था। वे पानी में मछलियों को देखने लगे। सुनहरी, लाल, धूसर रंग की मछलियाँ। कुछ छोटी व कुछ बड़ी।

मछलियों को उन्होंने कुछ देर के लिये निहारा फिर बाँये मुड़कर वे घोड़ा-स्टैन्ड से मल्लीताल की ओर जाने लगे। नुक्कड़ पर एक आदमी गरम बालू में मूँगफली भून रहा था। बंशीधर ने दो आने की मूँगफली खरीदी। वे एक टीले पर बैठ कर चुपचाप मूँगफली खाने लगे। मार्च महीने में भी मौसम से शरीर को बेधने वाली ठंडक गायब नहीं हुई थी। फिर भी झील में दो नौकायें नजर आ रही थी। लोग अभी भी नौकायन कर रहे थे। झील की ऊँची लहरों में हिचकोले खाती नाव दूर से पानी में डूबती हुई-सी प्रतीत हो रही थी।

"इस समय कौन ठंडी झील में नाव की सैर कर रहा है?" रत्ना सहसा बुदबुदाई।

"हिन्दुस्तानी तो हो नहीं सकते, जरूर अँग्रेज ही होंगे?" डूबे स्वर में बंशीधर बोला। "बहुत ही हिम्मती होते हैं ये लोग। वह देखो... कुछ अग्रेज सैलानी झील के किनारे लगे लोहे के बैंच पर भी बैठे हुये हैं और कुछ घुड़सवारी भी कर रहें।"

अन्धेरा आहिस्ते-आहिस्ते गहराने लगा था। काले, खुले आकाश में तारे टिमटिमा आये थे। पहाड़ों की ऊँचे-नीचे ढलानों पर बनी इमारतों में बिजली का प्रकाश जगमग करने लगा था। झील का पानी सभी प्रकार के प्रकाशों को प्रतिबिम्बित कर रहा था। तट पर सघन वृक्षों की छायाकृतियां शान्त लहरों में बनती-बिगड़ती जा रही थी।

रत्ना व बंशीधर काफी देर तक उस ठंडे टीले पर बैठे रहे। जब उठे तो उन्हें अपने कपड़े पीछे से ठन्डे व गीले महसूस हुये। वे नैनादेवी के मंदिर की ओर बढ़ने गये। हठात बंशीधर की नजर एक नये स्टूडियो पर पड़ी – आजाद स्टूडियो।

"यह स्टूडियो पहले तो यहाँ नहीं था," वह रत्ना से बोला।

"नहीं," रत्ना बोली, "मैं भी इसे आज ही देख रही हूँ। शायद नया खुला है।"

कौतुकता से बंशीधर ने रत्ना का हाथ पकड़ा और स्टूडियो के अन्दर घुस गया। स्टूडियोमैन उन्हे देख कर खड़ा हो गया।

"फोटो खिंचानी है?" उसने पूछा।

"हाँ," बंशीधर बोला।

"किस साइज की? पोस्टकार्ड साइज की?"

"नहीं, उसके तीगुने, अन्तर्देशी साइज की," बंशीधर बोला।

स्टूडियोमैन हँस पड़ा। बंशीधर भी हँसने लगा। रत्ना नहीं हँसी, न उसे समझ में आया कि वह दोनों क्यों हँस रहे है? एक क्षण वह स्टूडियोमेन को ताकती, एक क्षण बंशीधर को। आँखें विस्मय से फैली थी, मुँह उल्लास से खुला था।

स्टूडियोमैन ने अपनी पूरी दिलचस्पी से उनका आकर्षक पोज बनाया। रत्ना को कुर्सी में बैठाया और बंशीधार को बगल में खड़ा करके उसका हाथ रत्ना के कन्धो पर रखवा दिया। हिदायत दी कि वे कैमरे की ओर नहीं, बल्कि उसकी उंगलियो की तरफ देखें।

"यस प्लीज ! इधार मेरी उंगलियो को देखो।"

रत्ना व बंशीधार की ऑखे उसकी थिरकती चार उंगलियो पर स्थिर हो गई।

"एक-दो-तीन ! स्माइल प्लीज !... "

रत्ना व बंशीधार के होंठ मुस्कुराहट में हल्के से खिंचे, केमरे का बटन क्लिक हुआ, सफेद लाइट कौंधाी और फोटो खिंच गई।

दोनों सड़क पर निकल आये। बंशीधार अपनी कलाई पर बॅधाी घड़ी पर समय देखते हुये रत्ना से बोला – "नौ बज गये, घर चलें?"

रत्ना ने मौन स्वीकृति दी। दोनों ने घर वापसी का रास्ता पकड़ लिया। मल्लीताल की चढ़ाई उतरने लगे। झील में अब कोई भी नाव नजर नहीं आ रही थी। पानी बिना किसी हलचल के एकदम शान्त लग रहा था।

दर्शन-घर के घाट पर एक अधोड़ उम्र का नाविक खूँटे में नाव बॉधा रहा था। बाकी के नाविक शायद अपनी-अपनी नाव बॉधा कर जा चुके थे। सहसा बंशीधार का पता नहीं क्या सूझा, जल्दी-जल्दी घाट की सीढ़ियॉ उतरने लगा। रत्ना एक क्षण हतप्रभ ठिठकी, फिर पीछे-पीछे वह भी सीढ़ियां उतरने लगी। आश्चर्य से सोचने लगी कि क्या बंशीधार इतनी रात को पैदल चलने की बजाये उस पार नाव से जाना चाहता है !

समीप आयी तो देखा बंशीधार नाविक से पूछ रहा है – "एक दिन में कितने सैलानियों को इधार से उधार पहुँचा देते हो?

"यही कोई दस-बारह चक्कर काट लेते हैं।"

"कितने रूपयें कमा लेते हो दिन के?"

"तीन-चार रूपये।"

"बस !..."

"यह भी साब, मौसम में जब अँग्रेज सैलानी यहॉ आते हैं। अपने हिन्दुस्तानी लोग तो पैसे देना ही नहीं जानते। खैर अपने लोगों के पास पैसा है भी कहॉ देने के लिये?" वह शुष्क स्वर में बोला। एकदम खामोश होकर लोहे के खूँटे पर नाव की रस्सी की गॉठ लगाने लगा। दोनों चप्पू उसने नाव में टिका दिये थे। मौसम में ठंडक थी, लेकिन उसने ऐसे हल्के व पतले कपड़े पहने हुये थे जैसे गजब की गर्मी पड़ रही हो?

"रहते कहॉ हो यहॉ?" बंशीधार ने उससे पूछा।

रत्ना को झुंझलाहट होने लगी। बड़बड़ाई - "पता नहीं इनकी यह क्या आदत है? राह चलते अन्जाने लोगों से बेवजह की दोस्ती करने लगते हैं।"

"पटवाडांगर," नाविक बोला।

"अभी इस समय पटवाडांगर जाओगे?" बंशीधार आश्चर्य से बोला।

"फिर कहॉ जाऊँगा, साब?" नाविक हॅसते हुये बोला। उसकी शक्ल कुछ-कुछ नेपालियों जैसी लग रही थी, पर उसकी बोली का लहजा एकदम कुमाऊँनी था।

बंशीधार अपने प्रश्न पर शर्मिन्दगी महसूस करने लगा। सफाई देते हुये बोला – "नहीं, मैं तो इसलिये कह रहा हूँ कि पटवाडांगर यहॉ से बहुत दूर है।"

"रात गुजारने साब वहीं जाना पड़ता है जहॉ अपना घर हो," कहते हुये नाविक घाट की सीढ़ियॉ चढ़ने लगा। बंशीधार भी उसके साथ-साथ सीढ़ियॉ चढ़ने लगा। रत्ना भी खामोश उनके पीछे सीढ़ियॉ चढ़ने लगी।

घाट के ऊपर पहुँच कर नाविक दॉहिने, माल रोड की तरफ मुड़ गया। बंशीधार और रत्ना का भी घर जाने का रास्ता वही था। वे भी दॉहिने मुड़ गये

नाविक एक दार्शनिक अँदाज में बोला – "क्या करें साब ! पहाड़ों का मजा तो यहाँ आये सैलानी ही उठाते हैं। हमें तो इनके प्रकोप ही झेलने पड़ते हैं "

बंशीद्यार हँस कर बोला – "तुम बिल्कुल सही कहते हो।"

"अच्छा, तुम वैसे रहने वाले कहाँ के हो?"

"द्याारचूला के पास का," नाविक तेज-तेज कदमों से चलते हुये बोला।

बंशीद्यार ने भी उसके तेज कदमों के साद्या अपनी रफ्तार तेज कर ली। रत्ना को उनके साद्या चलने के लिये लगभग भागना पड़ रहा द्याा।

"अच्छा, तभी तुम देखने में नेपालियों जैसे लगते हो," बंशीद्यार उससे बोला, "द्याारचूला तो एकदम नेपाल की सीमा पर है।"

"हाँ, हमारे द्याारचूला के पहाड़ो से नेपाल के पहाड़ एकदम सामने नजर आते हैं, साब ! आद्यो पहाड़ उनके हैं और आद्यो हमारे...।"

"हमारे गढ़वाल के पहाड़ों से तिब्वत के पहाड़ नजर आते हैं। आद्यो पहाड़ उनके हैं और आद्यो हमारे," बंशीद्यार उसी लय से बोला।

"अच्छा, आप गढ़वाल के हो !" नाविक हर्षमिश्रित आश्चर्य से बोला। "यहाँ?..."

"यहाँ मेरी पोस्टिंग है। डेढ़ साल से यहाँ हूँ। भारत की सेना में हूँ।"

"बहुत खूब ! बहुत खूब !" नाविक प्रसन्नचित भाव से बोला। फिर एकाएक गंभीर होकर वह बंशीद्यार के जरा निकट आते हुये रहस्यमय ढंग से पूछने लगा – "आपकी सेना क्या कहती है? ये अँग्रेज जायेंगे यहाँ से?"

"जाना तो नहीं चाहते, लेकिन इन्हें जाना ही पड़ेगा। आखिर कोई किसी के घर कितने दिन टिक सकता है।"

"खूब कहा, साब !" कह कर नाविक खुल कर हँसने लगा। बंशीद्यार भी हँस पड़ा। रत्ना गंभीर बनी रही। उसे बंशीद्यार पर अत्यद्यिाक कोफ्त होने लगी द्यी। बंशीद्यार ने नाविक से गुफ्तगू के चक्कर में उसे पूरी तरह नजर अंदाज कर रखा द्याा।

"अच्छा, तुम यहाँ कितने सालों से..." बंशीद्यार नाविक से पूछने लगा कि रत्ना ने उसका हाद्या खींच लिया। कुद्ध होते हुये बोली – "तुम यह भूल ही जाते हो कि तुम्हारे साद्या मैं भी चल रही हूँ। तवसे लगे हुये हो उस नाव वाले से फालतू की बातें करने में।"

रत्ना उसे माल रोड के समानान्तर बनी कच्ची पगडंडी पर उतारने लगी। बंशीद्यार एक पल के लिये अचकचाया। नाविक की ओर विमूढ़ता से देखा। नाविक रत्ना के चेहरे की भावभंगिमा देख कर माजरा समझ गया। हँसते हुये सैल्यूट मारते हुये बोला – "अच्छा साब !"

कह कर नाविक ने एकदम से अपने कदम बहुत तेज कर लिये। बंशीद्यार अकवकाहट से रत्ना के साद्या सड़क से कच्ची पगडंडी पर उतर आया।

दोनों घर की ओर खामोश चलने लगे। वे दोनों ही एक-दूसरे से द्योड़ा बहुत नाराज हो गये द्ये। बंशीद्यार ने नाविक के चक्कर में रत्ना को एकदम उपेक्षित किया, और रत्ना ने बंशीद्यार को नाविक से अपना दिलचस्प वार्तालाप पूरा नहीं करने दिया। यह दो बातें दोनों को अखर रही द्यी, इसलिये दोनों में से कोई किसी से बात नहीं कर रहा द्याा। झील के किनारे-किनारे वे एकदम खामोश चल रहे द्ये। तट पर हवा सर्द हो गई द्यी। लहरों से बहती हवा दोनों के बदन में झुरझुरी पैदा कर रही द्यी।

खामोश चलते-चलते कुछ देर बाद बंशीद्यार सहसा बुदबुदाया – "आजादी का ऐसा जोश सब पर छाया हुआ है कि लोग अपने बच्चों, अपनी दुकानों का नाम भी आजाद रखने लगे हैं। नाव वाले भी अंग्रेजों के जाने की बात पूछने लगे हैं। पता नहीं कब आयेगी यह आजादी? पता नहीं कब छोड़ेंगे ये अँग्रेज हमारा देश?"

बंशीद्यार स्वयं से कह रहा द्याा या रत्ना से, पता नहीं चल रहा द्याा। परन्तु रत्ना बोली – "इतना हताश क्यों होते हो? अब आ तो रही है आजादी। अँग्रेज जा तो रहे है हमारे देश से।"

"अभी भी इनका कोई भरोसा नहीं कि छोड़ते हैं हमारा देश या नहीं," बंशीद्यार संदेह व्यक्त करते हुये बोला।

रत्ना एकदम से रूक गई। अपने पेट पर हाद्या रखते हुये बोली – "अँग्रेजो का जाना और देश में आजादी का आना अब उतना ही सच है जितना सच इस बच्चे का जन्म लेना।"

बंशीद्यार हँसने लगा। उपहास करते हुये बोला – "अब तो तुम बड़े-बड़े गंभीर संवाद बोलने लगी हो।"

"तुमने जो मेरे लिये रेडियो खरीदा है, उसमे खबरें सुनती हूँ। फिर आज कल्याणी दीदी भी सभी औरतों से कह रही द्यी कि अब आजादी दूर नहीं। पावर ट्रॉसफर हो रही है।"

"पावर ट्रॉसफर हो रही है... अरे वाह ! तुम तो ॲग्रेजी भी बोलने लगी हो। कल्याणी ने तुम्हें बहुत कुछ सिखा दिया है," बंशीद्यार बोला। दोनों हँस पड़े। वातावरण उनके बीच उन्मुक्त हो गया।

रत्ना बिस्तर पर लेटी तो नींद कोसों दूर...। बदन पर द्याकावट की जगह एक प्रफुल्लता... जिन्दगी इतनी अच्छी भी हो सकती है, सोचते हुये वह पुल्कित व विस्मित होती जा रही द्यी। सच, आज सुबह से जो कुछ भी हुआ, कितना अच्छा हुआ ! जलूस निकाला... झंडे को द्याम कर नारे लगाये...। कैसे ये बगल की सभी औरतें लुपर-लुपर जलूस में आ गई। पहले कह रही द्यी कि हमारे आदमियों की नौकरियॉं चली जायेगी।

कल्याणी ने कहा, रत्ना, तुम कितनी सुन्दर हो? काश तुम्हारा गोरा रंग... ।

हलवाई की दुकान पर जाकर जलेबी खाई। स्टूडियो में फोटो खिंचवाई। पिताजी की चिठठी आयी... हॉं, सबसे सलोनी बात कि अब उसका एक भाई है। सौतेली मॉं से कोई लगाव नहीं मगर भाई से उसे एक अदृश्य, अन्जाना प्रेम सहज ही उत्पन्न हो गया। इसका कारण शायद कि भाई व उसकी द्यामनियों में एक ही परिवार का खून...। कैसा होगा भाई? छोटे-छोटे हाद्य, छोटे-छोटे पैर, छोटा-सा मुँह...।

सोचते-सोचते रत्ना अपना उदर सहलाने लगी। एकाएक उसे अपने पेट में एक गति-सी महसूस हुई। ऐसा लगने लगा कि कोई हल्की हवा उसके भीतर रेंग रही हो। उसने सुन रखा द्या कि बच्चा गर्भाशय के तरल में घूमता है। उसके मुख से खुशी की चीख निकल गई।

बगल में सो रहे बंशीद्यार ने अलसाये स्वर में पूछा - "क्या हुआ?"

रत्ना ने बंशीद्यार के भारी अलसाये हाद्य को अपने नंगे पेट के ऊपर रख दिया।

"पेट में दर्द हो रहा है? जलेबियों की वजह से हो रहा होगा," अनगढ़ शब्दों में बंशीद्यार बड़बड़ाया।

"नहीं, दर्द नहीं हो रहा। तुम्हें क्या कुछ महसूस नहीं हो रहा मेरे पेट में? बच्चा घूम रहा है।"

"अच्छा ! बच्चे ने घूमना शुरू कर दिया ?" बंशीद्यार चिहुँक कर बोला। हाद्य को रत्ना के पेट पर ढंग से चिपटा कर भ्रूण की गति महसूस करने लगा। उसे अपनी हद्योली में भ्रूण के रेंगने की गति महसूस होने लगी।

वह बोला – "यह तो अभी मछली के ही आकार का होगा !"

"नहीं, मछली से द्योड़ा बड़ा बन गया हो गया..." रत्ना बोली।

"चार महीने हो गये?"

"चार से ज्यादा हो गये," रत्ना ने जवाब दिया।

"क्या-क्या अंग बन होंगे बच्चे के?"

"हाद्य, पैर, मुँह, पेट और दिल...निकल आयें होंगे।"

बंशीद्यार बड़बड़ाया – "आजादी का आना अब उतना ही सच है, जितना सच इस बच्चे का जन्म लेना।" उसने अपना हाद्य रत्ना के पेट से हटाया, करवट बदली, सो गया।

रत्ना भी सोने की कोशिश करने लगी। मगर नींद...। द्योड़ी देर में उसे बंशीद्यार के खर्राटों की आवाज सुनाई देनी पड़ने लग गई। वह सोने की कोशिश करती रही लेकिन नींद नहीं आ पायी।

उसे याद आया... एक बार उसके पिता ने कहा द्या कि जब कभी नींद नहीं आती तो मन ही मन किसी पावन शब्द या मंत्र का जाप करना चाहिये। जाप इतना तीव्र व सतत हो कि मस्तिष्क में सिर्फ वही गूँजे, कोई दूसरा विचार फटकने नहीं पाये। रत्ना सोचने

लगी कि किसका जाप करे? सहसा उसके होंठ स्वतः ही बुदबुदाने लगे —"नया इन्कलाब आया है, नारी शक्ति का उदय हुआ है, भारत माता की जय !... नया इन्कलाब आया है, नारी शक्ति का उदय हुआ है, भारत माता की जय !... नया इन्कलाब..."

ः 2 ः

एक-एक क्षण आजादी की अगुआई कर रहा था और रत्ना का गर्भस्थ शिशु आकार में बढ़ता जा रहा था...। कल्याणी के नेतृत्व में औरतों के निकाले गये जलूस के साढ़े-पाँच माह उपरान्त एक सुबह चार बजे रत्ना ने आजाद भारत में आँखें खोली। और बंशीधर रात भर सोया ही नहीं। वह मिलेट्री के अन्य जवानों के साथ बैठ कर मध्य रात्रि में नेहरू जी के प्रसारित होते भाषण को सुनता रहा। फिर उसके बाद अपने साथियों के गुफ्तगू करता रहा।

पूरे देश में एक हर्ष व उल्लास का वातावरण छाया हुआ था। मगर खेद... इस हर्ष व उल्लास में एक असीम दुःख, एक गहरी टीस का भी समन्वय था। उपमहाद्वीप हिन्दुस्तान को छोड़ने से पूर्व अँग्रेज शासकों ने इसे दो राष्ट्रों में विभाजित कर दिया था। स्थिति ही ऐसी विकट उत्पन्न हो गई थी कि केवल विभाजन ही एकमात्र विकल्प बच गया था। अँग्रेज प्रशासनिक अधिकारियों, मुसलिम लीग और काँग्रेस खेमे के प्रशासकों को समस्या का समाधान केवल विभाजन ही लगा था। एकमात्र गाँधीजी ही विभाजन के विरोधी थे लेकिन उनकी अकेली आवाज क्या कर लेती? इस प्रक्रिया में इतना खून-खराबा हुआ, दो साम्प्रदायों के बीच वह गहरी खाई बनी कि आगे आने वाली कितनी ही पीढ़ियों की धमनियों में उसकी सिहरन दौड़ती रहेगी। लेकिन अपने देश से फिरंगियों का जाना किसी भी कीमत में देशवासियों को मन्जूर था। उनका जाना हर हाल में एक हर्ष व उल्लास का मौका था। अतः समस्त वेदनाओं को भूलकर देशवासियों ने नयी आयी आजादी के जश्न में सरोबार होने की ठान ली।

नैनीताल के सभी स्थानों पर, लोगों ने आजादी का जश्न मनाया। अँग्रेजों के जाने की खुशी में उन्होंने सड़कों में पटाखे फोड़े, घरों व दुकानों में दीये जलायें। रत्ना ओर के बाड़े में सभी परिवारों ने मिलकर अपनी तरह से ही आजादी के जश्न को मनाया। सबसे पहले सुबह पुरूषों ने अपने सेना कार्यालय जाकर वहाँ अपने देश का तिरंगा ध्वज फहराया। परेड की। घर आकर सभी परिवारों से आठ-आठ आना चन्दा इकठठा करके घनश्याम हलवाई की दुकान से लडडू, जलेबी व बाल मिठाई मँगायी गई, बाँटी गई और खाई गई । शाम के वक्त औरतों ने अपने घरों में अपने-अपने प्रान्तों के प्रचलित एक-एक व्यंजन तैयार किये। फिर वे सब सामूहिक आँगन में आजादी का सामूहिक उत्सव मनाने के लिये जुट गये।...

अगस्त का महीना... सावन के दिन... चंचल मेघ जब-तब गरज कर बरस पड़ रहे थे किन्तु लोगों को आज न गरजते मेघों की परवाह थी और न बरसती रिमझिम फुवारों की। औरतें बरामदे में सिमटी हुई थी परन्तु बड़े बच्चे व पुरूष खुले आसमान के नीचे डटे हुये थे। एक ड्रम पर कपड़े का बना भारतवर्ष का तीन रंगों, बीच में चक्र, वाला झन्डा लपेट लिया था, इर्दगिर्द बच्चे व पुरूष नृत्य कर रहे थे। कागज के छोटे-छोटे कितने ही तिरंगे झन्डे बाड़े की गिली मिटटी में घोंप रखे थे, जोकि बरसते पानी से तुरन्त गलने भी लगे थे।

अजीब व आवेशमय नजारा बन गया था...। जोश व मदिरा के सुरूर में सभी सैनिक आँगन में निरन्तर नृत्य-गान कर रहे थे। औरतें बरामदे में बैठी चक-चक करने में लगी थी। कहकहों, ठहाकों व हँसी-ठिठोलियों की गूँज सारे वातावरण को स्पन्दित कर दे रही थी।...

एकमात्र रत्ना उत्सव का पूरा लुत्फ नहीं उठा पा रही थी। उसके गर्भ को नौ महीने नौ दिन पूरे हो गये थे। उसे हल्की-हल्की प्रसव वेदना शुरू हो गई थी। बरामदे पर एक तरफ दीवार का टेक लेकर वह पसर कर बैठ गई। उसके सुस्त पड़ गये चेहरे को देख बंशीधर उसके समीप आकर पूछने लगा – "क्या हुआ?"

बंशीधार के मुख से आती मदिरा की तीक्ष्ण गंध से रत्ना का मुँह कसैला हो गया। जल्दी से बोली – “कुछ नहीं-कुछ नहीं। तुम जाओ, जाकर नाच करो।”

उन दोनों के संवाद से वहाँ बैठ कर आपस में बतिया रही औरतों का ध्यान रत्ना की ओर खिंच गया। परमजीत परवाना पूछने लगी – “क्या हुआ रत्ना? अलग-थलग चुपचाप क्यों बैठी हो?”

रत्ना कुछ बोलती कि सरस्वती गोस्वामी बोली – “यह बोलती ही कब है? जब देखो मुँह बन्द किये रखती है।” परमजीत परवाना के कान में वह अपना मुँह चिपका कर फुसफुसा कर कहने लगी – “वैसे इस पहाड़न में हिम्मत बहुत है। कल्याणी बहनजी के सामने कैसे खड़े होकर बोलने लगी थी कि मुझे जलूस निकालना है। हम तो डर कर मारे पीछे हट गये थे।”

सभी औरते उत्सुकता में पूछने लगी – “क्या कहा कान में? क्या कहा कान में?” साथ में औरते यह भी समझ गई कि वह जरूर रत्ना के विषय में ही कुछ फुसफुसा रही है। मृदुला डॉडेकर करूण भाव से बोली –“भई, इस तरह रत्ना की मजाक मत बनाओ। अभी बेचारी की हालत ठीक नहीं है।”

रत्ना के चेहरे पर मायूसी के भाव आ गये। मैथीली सिन्हा पूछने लगी। “कितना महीना है अभी?”

“पूरा महीना है,” रत्ना ने धीरे से जवाब दिया।

“पूरा महीना !.. मतलब…?” कृष्णा चौधरी बोली।

सरस्वती गोस्वामी व तारा शुक्ला खी-खी हँसने लगी।

तारा शुक्ला अपनी हँसी को रोकते हुये बोली – “इस बेचारी को अभी ढंग से यह भी नहीं मालूम कि कितना महीना है?”

सभी औरतें रत्ना को एकटक देखने लगी। रत्ना कुछ नहीं बोली। चुपचाप मुँह फूला कर वहाँ से उठकर बरामदे के दूसरे छोर जाकर खड़ी हो गई।

“अरे, यह तो नाराज हो गई,” तारा शुक्ला बोली।

“ठहरो, मैं उसकी नाराजगी अभी ठीक करती हूँ,” मैथीली सिन्हा बोली। अपनी जगह से चिल्ला कर वह रत्ना से कहने लगी – “अरे रत्ना, तुम्हारा बच्चा बड़े सुन्दर समय में हो रहा है। लड़का हो तो नाम आजाद और अगर लड़की हो तो नाम आजादी रख लेना।”

सरस्वती गोस्वामी मुँह बिदकाते हुये बोली – “आजाद व आजादी नहीं, स्वतंत्र व स्वतंत्रा।”

“रत्ना का बच्चा बड़े अनोखे समय में पैदा हो रहा है। भाग्यवान होगा,” नौमी मिश्रा बोली। सब औरतें हँसने लगीं।

रत्ना ने किसी की बात पर कोई ध्यान नहीं दिया। आँगन में बंशीधार को सभी जवानों के बीच नृत्य करते देखने लगी – बारिश से बाल गीले होकर एकदम चिपक गये थे। बालों व चेहरे से पानी चूने में लगा था। तन पर पहनी वर्दी तरबतरभीग गई थी। बंशीधार की नजर रत्ना से टकराई। वह मुस्कुराने लगा। रत्ना भी मुस्कुराने लगी।

एक-एक करके रत्ना ने अन्य जवानों पर भी दृष्टि फेरी – सभी की हालत बंशीधार जैसी ही हो रखी थी, गीले-चिपके बाल, भीगी वर्दी और टपकता पानी… परन्तु थिरकतें पॉव किसी के रूक नहीं रहे थे। शुक्ला ड्रम को पीटने में लगा था, जिसकी थाप पर ही सब थिरक रहे थे। जवानों ने आज सुबह से ही अपनी वर्दी पहनी हुई थी।

जवानों से दृष्टि हटा कर रत्ना बच्चों को देखने लगी। उनके बाड़े में एक से आठ वर्ष तक के चौदह बच्चे थे। बड़े बच्चे तो अपने पिताओं के साथ आँगन में हुड़दंग मचाये हुये थे, छोटे बच्चे बरामदे में अपनी माताओं के साथ भिनभिन करने में लगे थे। रत्ना सहसा अपना उदर सहलाने लगी। प्रसव वेदना कमशः बढ़ रही थी…। सोचने लगी, पता नहीं यह उत्सव कब रूकेगा?

परमजीत परवाना व कृष्णा चौधरी ने थालियों में भोजन परसना शुरू कर दिया। सरस्वती गोस्वामी व मृदुला डॉडेकर जवानों को परसी थाली उठा-उठा कर पकड़ाने लगी। सभी जवान थिरकते हुये ही हाथों में खाना लेकर खाने लगे। संयोग से आज रत्ना से अपना पहाड़ी साग, फाणा, बड़ा स्वादिस्त बन गया था। सभी जवान उसे देखते हुये उसके फाणे की प्रशंसा करने लगे।

खाना खाते-खाते सहसा सिन्हा उसके पास आया, पूछने लगा – “भाभीजी, कैसे बनाया आपने यह साग?”

रत्ना अचकचा गई। जवाब देते नहीं बना। तभी परमजीत परवाना चिल्ला कर बोली – “रत्ना को तो बुलाओ। सबसे पहले तो खाना उसे ही परसना चाहिये था।”

मृदुला डॉडेकर बोली – "रत्ना आओ।"

सिन्हा भी बोला – "जाओ-जाओ भाभीजी आप। पहले खाना खाओ।"

रत्ना बुदबुदाई - "अच्छे समय पर पुकार लिया इन्होंने मुझे। मर्दों से तो बात करते हुये इतनी झिझक होने लगती है। हथेली से पसीना चूने लगता है।"

वह जाकर औरतों के पास नीचे दरी पर पालथी मारकर बैठ गई। परमजीत परवाना उसके लिये एक बड़ी कॉसे की थाली में भोजन परसने लगी। पंजाब के छोले-पूरी, महाराष्ट्र की पुरनपोली, राजस्थान की कचौरी व रायता, उत्तरप्रदेश के भुने चावल, बंगाल की छेने की मिठाई, पहाड़ का फाणा...। रत्ना ने इतने सारे व्यंजन एक साथ कभी खाये क्या, देखे तक नहीं थे। वह आश्चर्य से भर गई।

उसने ही नहीं, वहाँ उपस्थित अधिकांश लोगों ने इतने सारे व्यंजन कभी एक साथ नहीं खाये थे। परवाना कहने लगा – "हमें ऐसा गेट-टुगेदर बार-बार करना चाहिये। मिलकर खाने में देखो कितनी सारी चीजें खाने को मिल रही हैं, नहीं तो रोज एक सब्जी के साथ रोटी निगलो और ऊपर से कोरा पानी पीओ।"

"तुम्हें क्या रोज रंगीन पानी चाहिये?" बंशीधर तपाक से बोला। सब ठहाका मार कर हँस पड़े। रत्ना भी मुस्कुराने लगी।

"रत्ना, और चाहिये तो माँग लेना," परमजीत परवाना हँसते हुये रत्ना से बोली।

"रत्ना, तुम्हें मालूम है यह परमजीत तुम्हारा इतना ख्याल क्यों रख रही है?" कृष्णा चौधरी पूछने लगी।

रत्ना ने अनभिज्ञता से देखा।

"इसकी भी हालत तुम्हारी तरह है," एक शरारती मुस्कुराहट से कृष्णा चौधरी बोली। सब हँसे, मगर रत्ना ने कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की।

सरस्वती गोस्वामी मुँह बिदकाते हुये कृष्णा चौधरी के कान में फिर फुसफुसाई – "इस पहाड़न को ऐसे थोड़ी ही समझ में आयेगा। इसे तो सीधो-सीधो बताना पड़ेगा।" इस समय उसका स्वर तेज था। सभी ने सुन लिया। रत्ना ने भी। वह आवेश में आ गई। तुनक कर सरस्वती गोस्वामी से बोली – "इसमें न समझने की कौन-सी बात है? कृष्णा बहनजी ने यह ही तो कहा है कि परमजीत बहनजी भी मेरी तरह ही बच्चे से है।"

रत्ना के आवेश को देख कर औरतें सहम गई। मृदुला डॉडेकर बोली – "भई, रत्ना को आराम से खाना खा लेने दो। उसे ऐसी हालत में गुस्सा मत दिलाओ।"

रत्ना अपनी थाली उठा कर वहाँ से उठ बरामदे में दूर जाकर बैठ गई। वहीं बैठे चुपचाप खाना खाती रही। प्रसव वेदना उसकी बढ़ती गई। हर्षमिश्रित आश्चर्य से वह यकायक सोचने लगी, क्या उसका बच्चा सचमुच में अनोखे समय में पैदा हो रहा है। क्या सचमुच में उसका बच्चा भाग्यवान होगा !"

पार्टी का रंगीला सुरूर चलता रहा।...

रात्रि एक बजे जाकर पार्टी उखड़ी। कार्यक्रम को तब विराम दिया गया, जब जवान नृत्य करते-करते थक गये; औरतें बतियाते-बतियाते बोर होकर खामोश हो गई; छोटे बच्चे अपनी माताओं की गोदी में ढुलक कर सो गये।

"बस-बस, अब बहुत हो गया," सभी एकस्वर में अकस्मात बोले, "अब कल..." सभी जवानों ने गले लग-लग कर एक बार फिर आजादी की बधाई एक-दूसरे को दी। सभी विसर्जित होने लगे। औरतों ने अपने सोये बच्चों को उठाया, अपना-अपना सामान समेटा। रत्ना व बंशीधर भी अपने कमरे में आ गये।

रत्ना ने जूठी थालियाँ, खाली पतीला व लोटा रसोई की मोरी पर रखा। उन पर पानी डाल दिया। कमरे में आकर अपनी अच्छी नई धोती उतारी। घर की हल्की साधारण धोती पहन ली। फिर तुरन्त बिस्तर पर लेट गई। बंशीधर ने भी फटाफट अपनी गीली वर्दी उतारी, मोरी के पास रखी एक बाल्टी में डाली। कुर्ता-पाजामा पहन लिया।

दीवार पर टंगे आईने में निहारते हुये हर्ष से बोला – “खूब नाचे आज ! इतना नाचे कि हालत पस्त हो गई। इतना पहले कभी नहीं नाचे।”

“और दारू भी तो खूब पी,” बिस्तर पर लेटे-लेटे रत्ना नाराज स्वर में बोली। “मुझे नहीं मालूम ह्या कि तुम पीते भी हो।”

“अरे, वह तो कभी-कभार। इसे पीना ह्योड़ी ही कहते हैं।”

बंशीह्यार रत्ना के पास आया। गर्दन झुका कर उसके मुँह पर शराब का भभका छोड़ने लगा।

“चलो हटो यहाँ से,” रत्ना अपना मुँह हटाते हुये बोली, “आज तुम दूसरी तरफ मुँह करके सोना। यह बदबू मुझसे सहन नहीं हो रही।”

बंशीह्यार ने बिजली बुझाई। बिस्तर पर चढ़ते हुये बोला – “बदबू कह कर इसकी इन्सल्ट मत करो।”

वह रत्ना को अपनी बाँहों में लेने लगा।

“हट जाओ। दर्द हो रहा है।”

“क्या हो रहा है?” न समझते हुये बंशीह्यार बोला।

“दर्द हो रहा है,” वह बोली और तुरन्त उठ गई। लाइट जला दी।

“कब से हो रहा है?”

“हल्का-हल्का तो दिन से ही हो रहा है, अभी-अभी बढ़ गया है,” वह बोली।

“तो पहले क्यों नहीं बताया?”

रत्ना चुप रही। अपनी कमर पकड़ कर बैठ गई।

“क्या करना है अब?” बंशीह्यार पूछने लगा।

“अभी कुछ नहीं करना। तुम सो जाओ।”

“तुम इस तरीके से बैठी हो। मैं कैसे सो सकता हूँ?”

बंशीह्यार बिस्तर पर लेटे-लेटे रत्ना का चेहरा ताकने लगा – प्रसव वेदना की हिलोरें उसके पेट में कस कर उछलने लगी ह्यी। अपना पेट उसने निरन्तर पकड़ा हुआ ह्या। पीड़ा के आते-जाते भाव उसके मुख पर स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगे ह्ये।

बंशीह्यार बुदबुदाने लगा –“आजादी का आना अब उतना ही सच है जितना कि इस बच्चे का जन्म लेना। आजादी तो आ गई , अब बच्चा भी आना चाहता है।”

“दाई को बुला लाऊं?” वह बोला।

“अभी नहीं।”

रत्ना दरवाजा खोल कर कमरे से बाहर-भीतर करने लगी। बंशीह्यार चुपचाप बिस्तर पर लेटे उसे देखता रहा। जब प्रसव-पीड़ा असहनीय हो गई। वह अक्षरशः कराहने लगी, तो वह उठा। जल्दी से पैंट-कमीज पहनी, छाता-टार्च उठाया और फुरती से भाग गया – गुरखा लाइंस से दाई को बुलाने। तल्लीताल, गुरखा-लाइंस के पास रह रही जानकी दाई का अता-पता उसने आनन्द वस्त्र-भन्डार वालो से पहले ही ले लिया ह्या।

पचास-पच्चपन वर्ष की उम्र की दिखने वाली जानकी दाई ने अपनी अनुभवशील आँखों से बिस्तर पर दर्द से कराह रही रत्ना को कुछ पलों के लिये घूरा। अपने हाह्यों से उसके नंगे पेट का स्पर्श करके कुछ जाँच की। तुरन्त बंशीह्यार से बोली – एक बाल्टी पानी गर्म करो और एक तेज ह्यार का चाकू साफ करके देदो।

बंशीह्यार ने रसोई में जाकर स्टोव जलाया। दो पतीलों में पानी गर्म किया, चाकू को रगड़ कर साफ कर, एकदम चमका कर दाई को दे दिया।

इस बीच रत्ना पीड़ा से बुरी तरह छटपटाने लगी। बंशीह्यार को देखती हुई अचेत-सी अवस्ह्या में बोली – “बहुत दर्द हो रहा। सहा नहीं जा रहा।”

बंशीधार उसके सिरहाने पर बैठ, उसका सिर सहलाने लगा। पीड़ा से ठंडे पड़ गये हाथों की मालिश कर, गर्म करने की कोशिश करने लगा। कोमल स्वर में दिलासा देने लगा – "सब ठीक हो जायेगा, रत्ना। बस कुछ ही देर में तुम माँ और मैं बाप बन जाऊँगा।"

"अच्छा-अच्छा, बहुत हो गया, तुम माँ और मैं बाप ! " दाई तुनक कर बोली। "अब तुम बाहर निकलो कमरे से।"

"क्यों?" बंशीधार ने आश्चर्य से पूछा।

"क्योंकि तुम्हारा अब यहाँ कोई काम नहीं। अगर तुम यहाँ रहोगे तो मेरे काम में भी रूकावट आयेगी।"

"पर यहाँ मेरी जरूरत पड़ेगी तो?" बंशीधार ने दाई का प्रतिवाद किया।

"नहीं, यहाँ तुम्हारी अब कोई जरूरत नहीं। तुम जो कुछ कर सकते थे, तुमने कर लिया। अब तुम बाहर जाओ।"

बंशीधार ने एक नजर दाई को देखा, फिर रत्ना को। अपनी चढ़ती साँसों को थामते हुये रत्ना ने उसे बाहर जाने का संकेत दिया।

"अच्छा, मैं पड़ोस में से किसी को जगाता हूँ। परवाना, चौधारी में से किसी की बीवी आ जायेगी तुम्हारे पास।"

"नहीं !" रत्ना एकदम से बोली। "तुम किसी को नहीं जगाओगे। मुझे किसी की जरूरत नहीं। मेरे पास सिर्फ यह दाई काफी है।"

"अच्छा, मैं डॉडेकर को जगाता हूँ। डॉडेकर की औरत तो तुम्हें पसन्द आती है।"

"मैंने कहा न किसी को नहीं जगाना। मुझे कोई नहीं चाहिये," रत्ना हॉफते हुये बोली।

"काहे को जिद करते हो भाई?" दाई बोली। "जब बिटिया को कोई नहीं चाहिये तो रहने दो। वैसे भी जच्चा के समय ये फालतू की औरतें काम में दखल ही देती हैं।"

बंशीधार कमरे से बाहर निकल आया। दाई ने फटाक से दरवाजा बन्द कर दिया। बंशीधार बरामदे में खड़े होकर आँगन की ओर यूँ ही देखने लगा – साठ वॉट का बल्ब जल रहा था; कपड़े के तिरंगे झंडे से लिपटा ड्रम वहाँ शान्त पड़ा था; कागज के तिरंगे झंडे बुरी तरह गल कर बाड़े की मिट्टी में समाने लगे थे। बंशीधार आँगन से निकल कर बाहर कच्चे मैदान की ओर बढ़ गया। ढाई बीघे की समतल-सी भूमि पर बना चौबीस कक्षों का यह सेना का अहाता निपट सन्नाटें में डूबा था। लोग अपने-अपने बन्द अंधेरे कमरों में सोये थे। वृक्ष अन्धाकार में शान्त खड़े थे। दूर किसी कुत्ते की भौंकने की आवाज भी नहीं सुनाई दे रही थी, झींगुरों का कोई रात्रि स्वर भी नहीं गूंज रहा था।

बंशीधार वापस चलकर बरामदे की सीढ़ियो पर बैठ गया। सोचने लगा कि अभी कुछ ही क्षण पूर्व यहाँ कितनी हलचल, कितना शोर-गुल था ! अब एकदम से इतनी गहरी खामोशी...। सभी दरवाजे बन्द हैं। सभी बन्द दरवाजों के अन्दर अंधाकार व्याप्त है। बस केवल एक उसके कमरे के अन्दर बिजली जल रही है, जहाँ एक नई जिन्दगी साँस लेने वाली है। एक-एक क्षण उसके बच्चे के जन्म की अगुआई कर रहा है...

रूके मेघ फिर बरस पड़े। वर्षा की हल्की-हल्की फुहारें उसके पैरों तक पहुँचने लगी। उसने पैर खींच लिये, घूमकर बरामदे पर बने खम्बे के सहारे दूसरी तरफ मुँह करके बैठ गया। टार्च चमका कर कलाई में बँधी घड़ी में समय देखा – सवा तीन बज गये थे। वह थोड़ा और पसर गया। खम्बे पर अपनी पीठ व सिर को ढंग से टिका दिया। नींद के झोंके उसे आने लगे पर वह उन पर काबू करता रहा।

रह-रह कर वह घड़ी पर टार्च चमका कर खिसकते हुये समय को देखता जाता। जब पौने पाँच बज गये तो वह उठा। अपने कमरे की ओर बढ़ा, दरवाजे पर कान लगा कर कुछ सुनने की कोशिश करने लगा। यद्यपि रत्ना कोई ऊँची आवाज नहीं कर रही थी, परन्तु उसकी चीखें तीव्र व मर्म थी। दाई उसको पुचकार रही थी – "थोड़ा और जोर !... थोड़ा और !!.... "

"हाय राम... जी... मेरे से तो सांस तक नहीं ली जा रही, और दम कैसे लगाऊं?"

दाई उसको झिड़कने लगी – "बार-बार सांस खींच कर तुम बच्चे को ऊपर चढ़ा ले रही हो। इतना नादान बनने की जरूरत नहीं है। मुझे यहाँ चार घन्टे हो गये तुम्हारे आगे बैठे हुये। जल्दी करो।"

"इऊँ !.. ऊँ !!..ऊँ !!!.." रत्ना दम लगाने की कोशिश करने लगी।

"हॉ-हॉ बस !... एक जोर का जोर लगाओ... और..."

रत्ना जोरों से हॉफने लगी। हॉफते स्वर के बीच अटक-अटक कर बोलने लगी – "मैं अब नहीं बचूंगी। मेरी मॉ भी मुझे पैदा करते मर गई थी।"

बंशीधार से रहा नहीं गया। व्याकुलता में दरवाजा थपथपाने लगा।

"तुम थोड़ा सब्र करो," दाई अन्दर से चिल्लाई, "जब हो जायेगा तो मैं खुद ही तुम्हें अन्दर बुलाऊँगी। तब तक चुपचाप बाहर बैठे रहो। परेशान मत करो।"

बंशीधार के दरवाजे को थपथपाते हाथ रूक गये। दरवाजे के पास विमूढ़-सा खामोश खड़ा होकर रह गया।

कुछ देर बाद रत्ना की चीखें प्रबल व उग्र हो गई। सम्भवतः प्रसव का निर्णायक चरण आ गया था। बंशीधार से अधिक बर्दा स्त करना संभव न हो सका। वह दाई पर चिल्ला पड़ा – "तुम तुरन्त दरवाजा खोलो, नहीं तो मैं इसे तोड़ गिराता हूँ।"

अन्दर से दाई का कोई स्वर नहीं आया। बंशीधार लगभग दरवाजे को पीटते हुये पुनः चिल्लाया – "दरवाजा खोलती हो कि नहीं ! नहीं तो मैं तोड़ूँ इसे "

अन्दर से फिर कोई जवाब नहीं आया। बंशीधार बेतहाशा दरवाजा पीटने लगा।

"बस-बस हो गया," दाई का स्वर गूँजा।

"क्या हो गया?" बंशीधार बाहर से गुर्राया।

"बस-बस हो गया," दाई पुनः बोली।

"क्या हो गया?" बंशीधार पुनः गुर्राया।

"बच्चा !..."

अगले ही पल बच्चे की पतली, तीक्ष्ण व छोटी-छोटी रोने की आवाज गूँजने लगी।

इसके साथ ही रत्ना की हॉफने व चीखने की सभी उग्र आवाजें बन्द हो गई। बंशीधार ने इत्मीनान की गहरी सांस ली। जाकर बरामदे की सीढ़ियों पर चुपचाप बैठ गया।

वर्षा की बौछारें थम चुकी थीं। आसमान थोड़ा खुल चुका था। बंशीधार सीढ़ियों पर बैठा रहा। करीब बीस मिनट उपरान्त कमरे का दरवाजा खुला। दाई कपड़े में लिपटे नवजात शिशु को लेकर बाहर आयी। बंशीधार से बोली – "लो पकड़ो ! बहुत ही बेताब हुये जा रहे हो। लड़की है।"

बंशीधार एकदम से उठा। बच्ची को पकड़ने के लिये हाथ बढ़ाये कि दाई फिर शुरू हो गई - "हाय ईश्वर ! बड़ी ही कठिन रात थी। इस जानकी दाई ने पिछले बीस सालों में कितने ही बच्चों को उनके मॉ की देह से अलग किया है लेकिन इतना मुश्किल प्रसव कभी नहीं देखा। अन्दर औरत अपनी सॉस ऊपर चढ़ाये जाये, बाहर से मर्द दरवाजा पीटता जाये। ऐसा संकट था कि मैं खुद से बोली – जानकी अब तू बूढ़ी हो गई है, बन्द कर यह नाल काटने वाला काम !..."

बंशीधार ने मुस्कराने का प्रयत्न किया। चुपचाप अपनी जेब से पॉच का नोट निकाल कर दाई की ओर बढ़ाया। दाई की ऑखे चमक उठी लेकिन अपना हाथ बढ़ाने के बजाये इन्कार करते हुये बोली – "इतने ज्यादा रूपये नहीं बनते मेरे, साहब। लोग तो इस जानकी दाई को बारह आना दिया करते है। कुछ भले लोग एक रूपया भी दे देते हैं। आपके यहॉ मुझे सारी रात जागकर बितानी पड़ी इसलिये आप दो रूपये दे दीजिये। "

"रख लो," बंशीधार बोला।

दाई एकदम से कृतज्ञ हो गई। उसका कर्कश स्वर तुरन्त मृदुल हो गया। पॉच का नोट नवजात बच्ची के ऊपर फिरा कर बलाई यॉ लेते हुये कहने लगी – "साक्षात लक्ष्मी है यह ! देश को आजादी दिलवा कर आयी है। इसकी मॉ भी देवी का रूप है जिसने ऐसे अदभुद समय में इसे जना है। लेकिन बेचारी घबड़ा गई थी। असल में पहला बच्चा था न और उमर अल्हड़ ! कहते जा रही थी, मेरी मॉ भी मुझे पैदा करते मर गई थी, मैं भी मर जाऊंगी।"

दाई के साथ बंशीधार भी रत्ना की नादानी पर हॅस पड़ा।

दाई अपनी हँसी रोकते हुये एकाएक गंभीर भाव से बोली – "साहब, अब हँसी आ रही है। लेकिन उस समय बिटिया के मुख से ऐसी बातें सुन कर तो मैं घबड़ा ही गई थी।"

बंशीधार के भी हँसी में खिले होंठ सहसा सिकुड़ गये। वह भी उस समय रत्ना की ऐसी बातों से बुरी तरह घबड़ा गया था। अब उसकी उसी बात पर हँसी आ रही थी।

"अब दूसरे बच्चे के समय सब ठीक रहेगा," दाई बोली। बच्ची को प्रशंसनीय नजरों से निहारने लगी। एक पल बाद बंशीधार को देखते हुये विनम्र स्वर में बोली – "साहब, अगले बरस इस बच्ची का जब भाई आयेगा तो नाल काटने मुझ जानकी दाई को ही बुलाना।"

बंशीधार कुछ नहीं बोला, केवल हँसा। हँसते हुये उसने बच्ची को अपने हाथों में ले लिया। उसे लगा जैसे एक लुंजपुंज, मांस का लोथड़ा उसके हाथों में आ गया है। लेकिन हथेली में महसूस हो रही ध्दय की तेज धड़कन अवगत करवा रही थी कि उस मांस के लोथड़े में जीवन है। बंशीधार मुक्त भाव से नई-नई जन्मी बच्ची को निहारने लगा...।

दाई ने विघ्न डाला। कमरे से गन्दे कपड़ों का ढेर लाते बोली – "मैं ये गन्दे कपड़े धो देती हूँ। गुसलखाना किधर है?"

बच्ची से नजरे हटा कर बंशीधार गुसलखाने की ओर संकेत करने लगा।

गुसलखाने को जाते हुये दाई बोली – "वैसे कपड़े धोने का काम मैं नहीं करती। पर तुम्हारे यहॉ काम करने वाला कोई दिख नहीं रहा, इसलिये कर रही हूँ।"

बंशीधार कुछ नहीं बोला। मूक फिर बच्ची को निहारने लगा। उसमें जीवन के कुछ और चिह्न तलाशने लगा – बन्द ऑखें, जो महज दो लकीरें प्रतीत हो रही थी, जरा-जरा-सी देर में खुल रही थी। जब वे खुलती तो दो काले चमकदार बटन-सी लगने लग जाती।

थोड़ी देर में उसने अपना छोटा-सा गुलाबी मुख खोल कर उबकाई ली। बंशीधार मुस्कुरा पड़ा। भरपूर नजर बच्ची पर डाल कर, आकाश की ओर देखने लगा। हल्का-हल्का सवेरा हो गया था। सूर्योदय पूर्व की लालिमा आकाश में बिखरने लगी थी। बंशीधार के होंठ बुदबुदाने लगे – "भोर, पौ-फटना, प्रभात, पूर्वाह्न, उषा-काल !... हॉ उषा !!..." वह उछल गया।

बच्ची को हाथ में थामे अन्दर भागा।

अन्दर दबी-दबी गर्म दुर्गन्ध भभक रही थी। बिस्तर पर रत्ना एकदम पस्त पड़ी थी। बंशीधार चहकते हुये बोला – "हमारी बेटी का नाम उषा होगा। यह नाम इसके लिये बिल्कुल सटीक है क्योंकि इसका जन्म उषा-काल के समय हुआ। दो उषा-काल... एक आजादी का, दूसरा सुबह के सूरज का। तुम्हे रत्ना, उषा का अर्थ मालूम है? उषा का अर्थ है – सवेरा, मतलब प्रारम्भ।"

रत्ना निर्जीव आवाज में पूछने लगी – "तुम बेटी के जन्म से खुश तो हो न !"

"यह भी कोई पूछने की बात है? मैं तो बेटी ही चाहता था। मेरी कोई बहन नहीं है। दूर कहीं सोचते हुये बंशीधार बोला – "सच रत्ना, घर में लड़की की कमी बड़ी खटकती थी। हर समय घर में बस मुस्टंडे से भाई ही नजर आते थे।"

"और रत्ना, तुम्हारी भी तो कोई बहन नहीं है।"

"मेरा तो कोई भी नहीं। न भाई, न बहन... "

"फिर गिड़गिड़ाना शुरू कर दिया," बंशीधार ने एकदम से टोका। "अरे, जो रिश्ते नहीं हैं उनके लिये क्या रोना? जो रिश्ते हैं और जो बन रहे हैं, उनकी खुशी मनाओ। और अपने भाई को तुम इतनी जल्दी भूल गई !"

"अरे हॉ ! मैं तो भूल ही जाती हूँ कि मेरा अब एक भाई भी है।"

"और एक बेटी भी," कहते हुये बंशीधार ने बच्ची को उसके बगल में लेटा दिया। रत्ना ने बच्ची को निहारा। उसे यह सोच कर थोड़ा अजीब लगा कि यह ही उसके पेट में थी। वह उसके चारों ओर लिपटा कपड़ा हटा कर उसकी देह के अंगों का परिक्षण करने लगी – पैर, पेट, नाभि, वक्ष, गर्दन, मुँह, सिर...। रत्ना ने अपनी कृति को भींच लिया...